श्रीनिग्रहाचार्यविरचितं

# परमाक्षरसूत्रम्

## ज्ञानवतीटीका एवं सूत्रविस्तारभाष्य के साथ

लेखक
श्रीभागवतानंद गुरु

सम्पादक
अरुण कुमार पाण्डेय

आर्यावर्त सनातन वाहिनी 'धर्मराज' के सौजन्य से प्रकाशित
NOTION PRESS

NOTION PRESS

India. Singapore. Malaysia.

ISBN xxx-x-xxxxx-xx-x

First Published – February, 2021
Second Edition – May, 2021

श्रीनिग्रहाचार्यविरचितं

# परमाक्षरसूत्रम्

ज्ञानवतीटीका एवं सूत्रविस्तारभाष्य के साथ

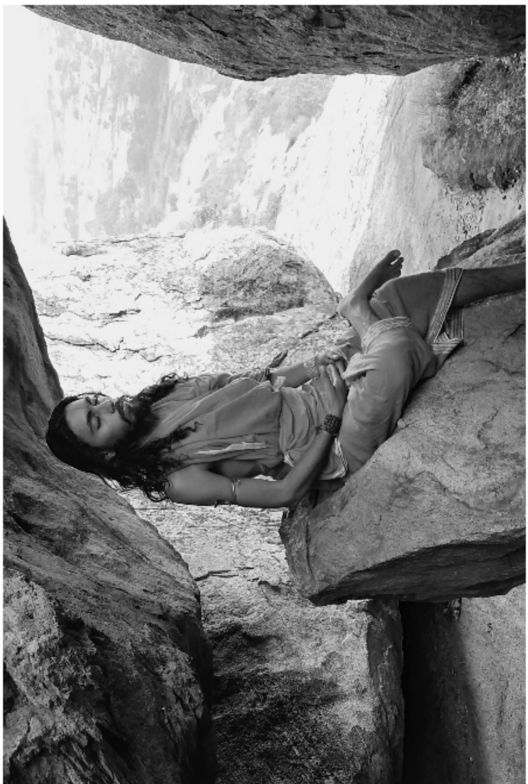
लेखक
श्रीभागवतानंद गुरु

सम्पादक
अरुण कुमार पाण्डेय

आर्यावर्त सनातन वाहिनी 'धर्मराज' के सौजन्य से प्रकाशित
NOTION PRESS

आर्यावर्त सनातन वाहिनी 'धर्मराज' के सौजन्य से प्रकाशित

धर्मसंरक्षणार्थायाधर्मसंहारहेतवे । निग्रहणाख्य धर्माज्ञा लोके प्रवर्द्धताम् ॥



श्रीमन्महामहिम विद्यामार्तण्ड श्रीभागवतानंद गुरु (श्रीनिग्रहाचार्य)

# प्राक्कथन

। ॐ असावादित्यो ब्रह्म ।

सर्वविदित है कि भारतीय ज्ञानपरम्परा समग्र विश्व की ज्ञानपरम्परा के उपजीव्य के रूप में प्रतिष्ठित है। हमारी अविरल गति वाली यह सनातन ज्ञानधारा गंभीर चिंतन के द्वारा परमेश्वर की कृपा से भारतीय प्राचीन वैज्ञानिक ऋषियों को साक्षात्कृत हुई है और इसके अनेक शाखोपशाखादि प्राप्त होते हैं। मुण्डकोपनिषत् के अनुसार विश्व की समग्र विद्याओं को दो भागों में बांटा जा सकता है। पहली ब्रह्मविद्या यानि पराविद्या और दूसरी वेद वेदाङ्गादि समग्र विषयों को समेटे हुए अपराविद्या है। कहा गया है कि -

द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति परा चैवापरा च
॥१।१।४॥
तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो
व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति।
अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते
॥ १।१।५ ॥

पराविद्या का तात्पर्य होता है श्रेष्ठा विद्या अर्थात् विश्व की समग्र विद्याओं में श्रेष्ठतम विद्या ब्रह्मविद्या है। वही एकमात्र पारमार्थिकी विद्या है। उसी ब्रह्मविद्या के द्वारा ज्ञेय एकमात्र परमार्थ सत्तत्त्व ब्रह्म है। इसी ब्रह्मज्ञान के महत्त्व के विषय में श्रुतियाँ कहती हैं -

*यस्मिन्विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति , ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति* इत्यादि। भगवान् श्रीकृष्ण भी भगवद्गीता में कहते हैं *यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते* । अर्थात् उस ब्रह्म को जान लेने के बाद अन्य कुछ भी ज्ञातव्य नहीं बचता सब कुछ ज्ञात हो जाता है। उसी ब्रह्म की पांच शक्तियों (उद्भव, स्थिति, संहार, अनुग्रह एवं निग्रह) के प्रकाशन के लिए निर्गुण ब्रह्म सगुण भावापन्न होकर सूर्य/ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश एवं दुर्गा का रूप धारण करते हैं। ब्रह्म की निग्रह शक्ति में शेष चारों शक्तियों का लोप हो जाता है।

उसी निग्रह शक्ति से सम्बद्ध पूर्वकाल में निग्रह सम्प्रदाय प्रचलित था जो निग्रहागम के सिद्धांतों पर चलता था। परन्तु दुर्भाग्यवश वह अनुपम सम्प्रदाय और उसके निग्रहागम ग्रन्थ भी अधिकतम भारतीय गूढ ज्ञानों की तरह लुप्तप्राय हो गये, उसके आचार्य ही निग्रहाचार्य कहलाते हैं। अधुना उक्त निग्रह सम्प्रदाय की कोई अलग से स्वतन्त्र मान्यता या विशिष्ट परम्परा प्राप्त नहीं होती है।

निग्रह सम्प्रदाय का कार्य केवल इतना है कि शेष सभी वैष्णव, शैव, शाक्त, कौल, गाणपत्य आदि अपने अपने सम्प्रदाय के सिद्धांतों एवं आचारों का संकरहीन अनुपालन करें। अर्थात् इसका काम केवल इतना है कि जहां कोई भी धर्मविरुद्ध जा रहा हो, उसे क्षमतानुसार उसके ही अपने सम्प्रदाय के आचारानुसार मर्यादित करना।

निग्रह सम्प्रदाय कोई नवीन स्वयम्भू नहीं अपितु प्राचीन और मान्य वैदिक सम्प्रदाय है इसका सांकेतिक वर्णन “शक्तिसङ्गमतन्त्र” नामक

ग्रन्थ में मिलता है, इसके अधिकारियों के लिए कुछ विशिष्ट निग्रह प्रयोगों का वर्णन “पक्षिराजतन्त्र” आदि में मिलता है। निग्रह सम्प्रदाय के प्रधान देवताओं में शरभेश्वर, हनुमान्, क्रोधभैरव, स्कन्द, दुर्गा, नारायण आदि हैं। *निग्रहो निग्रहाणाम्* इस स्कन्द पुराण के वाक्य से निग्रह के रूप में स्कन्द एवं *सद्रक्षणाय खलनिग्रहणाय* इस श्रीमद्भागवत के वाक्य से नारायण का संकेत होता है। पूज्यपाद आदिशंकराचार्य जी ने भी अपने तान्त्रिक कृतियों में निग्रह प्रयोगों का सङ्केत किया है। अब इसका स्वतन्त्र प्रारूप दृश्य नहीं होता।
शक्तिसङ्गममहातन्त्रराज के अनुसार -

निग्रहागमतन्त्राणि शतद्विशतभेदतः।
अयमागमपर्यायः सिद्धरूपः प्रकाशितः॥
(श्रीशक्तिसङ्गममहातन्त्रराज, छिन्नमस्ताखण्ड, सप्तम पटल, श्लोक - ११६)

निग्रहागम के तन्त्रों की संख्या सौ है और दो सौ उपतन्त्र हैं। यह सिद्धरूप आगमवर्णन प्रकाशित किया गया है। जैसे वैष्णवागम से वैष्णव सम्प्रदाय, शैवागम से शैव, अघोरागम से अघोर एवं शाक्तागम से शाक्त सम्प्रदाय संचालित होते हैं, वैसे ही निग्रहागमों से निग्रह सम्प्रदाय संचालित होता है। इस सम्प्रदाय के ग्रन्थों में पक्षिराजतन्त्र आदि प्रसिद्ध हैं जिसमें निग्रहागमों में वर्णित निग्रह प्रयोग की मर्यादा, निग्रहदारुणसप्तक आदि का वर्णन मिलता है, जिसका पाशुपतास्त्र के मन्त्रों से सम्पुटित प्रयोग भी मिलता है, जो शत्रुओं के मारण में प्रशस्त है। इसके रचयिता श्रीनृसिंह भगवान् हैं।

*"सर्वं प्रलये निगृह्णातीति निग्रहस्तस्यागमो*
*निग्रहागमस्तस्याचार्यो निग्रहाचार्यः"*

अर्थात् प्रलयकाल में समग्र जगत् का निग्रह करने वाली शक्ति निग्रह शक्ति है, उसका आगम निग्रहागम है और उसके आचार्य निग्रहाचार्य होते हैं। भारतीय ज्ञानधारा में आगामों की परम्परा और उसके पर्यायों की समृद्धि अद्वितीय है।

चीनागम, बौद्धागम, जैनागम, पाशुपतागम, कापालिकागम, सूर्यागम, पाञ्चरात्रागम, अघोरागम, मञ्जुघोषागम, भैरवागम, बटुकागम, सञ्जीवन्यागम, सिद्धेश्वरागम, नीलवीरागम, मृत्युञ्जयागम, मायाविहारागम, विश्वरूपागम, योगरूपागम, विरूपागम, यक्षिण्यागम और निग्रहागम, ये सभी गोपनीय सम्प्रदायों के आगमपर्याय हैं जिनमें एक एक पर्याय में कई कई तन्त्र एवं उपतन्त्र हैं। इनमें कुछ वेदसम्मत हैं तो कुछ अवैदिक भी हैं।

इनमें से निग्रहागम ही निग्रह सम्प्रदाय का संविधान है जिसके बाद सम्प्रदायावसान हो जाता है और अन्य प्रभेद शेष नहीं रहते हैं। निग्रहागम परमाक्षर की आराधना करते हैं जिससे निग्रहागम की मान्यता वेदसम्मत है, और इसमें बहुधा सात्त्विकाचार का ही आश्रय लिया जाता है। प्रस्तुत परमाक्षरसूत्र नामक यह दुर्लभ ग्रन्थ निग्रह सम्प्रदाय को लोगों के समक्ष लाने हेतु एक प्रयास है। यह ग्रन्थ अव्यक्त परब्रह्म और अव्यक्त जीव के स्वरूप को प्रकाशित करने के लिये कहा गया है।

इस ग्रन्थ के सामान्य परिचय के बारे में कहा जाये तो श्री कृष्णद्वैपायन वेदव्यास भगवान् ने भगवती कमला के चरणों के नीचे स्थित सहस्त्र दलों वाले कमल की पंखुडियों में परमाक्षर महाभागवत नामक पुराण का दर्शन किया। उसी परमाक्षर को जब निग्रहाचार्य कामरूप में तपस्यार्थ निवास कर रहे थे तब उन्होंने श्री देवीपुराण महाभागवत के पारायण के फलस्वरूप माता कामाख्या के प्रसाद से प्राप्त किया तथा तपस्या के फलस्वरूप देवी की कृपा से परमाक्षरसूत्रों की भी प्राप्ति हुई।

परमाक्षरसूत्रों को निग्रहाचार्य ने चौबीस वर्ष की आयु में ज्ञानवती-टीका के साथ तथा विभिन्न शास्त्रीय प्रमाणों से युक्त वचनों के द्वारा सूत्रविस्तार भाष्य के साथ लिखा। सदाचारी ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण ही इस ग्रन्थ में प्रतिपादित विषयों के पात्र हैं। विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त तथा मन्दबुद्धियों के लिये यह ग्रन्थ नहीं है।

इस समग्र ग्रन्थ के इस कलेवर का प्रथम अध्येता होने का गौरव मुझे प्राप्त हुआ यह मेरा परम सौभाग्य है। पूज्य निग्रहाचार्य विद्यामार्तण्ड श्रीभागवतानंद गुरु जी ने मुझे इस योग्य समझा इस लिये मैं स्वयं को धन्य मानता हूँ। यह परम ज्ञान जो हजारों वर्षों तक लुप्तप्राय अवस्था में था इसको भगवती की कृपा से प्राप्त करके जो निग्रहाचार्य जी ने लेखन किया उसको पढकर अभिभूत हूँ।

इस ग्रन्थ में निग्रह सम्प्रदाय के सिद्धान्तों को जिस निपुणता के साथ दुर्लभ शास्त्रीय ग्रन्थों के प्रमाणों के साथ लिखा गया है सचमुच वह अनुकरणीय और प्रशंसनीय है। इसमें मेरा कोई विशेष योगदान नहीं

है, केवल मैंने इसको व्याकरणात्मक दृष्टि से अध्ययन करते हुए संगणकीय टङ्कणादि जनित दोषों का निवारण किया है। यह ग्रन्थ पूर्णतया व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध है ऐसा प्रमाण नहीं दे रहा क्योंकि कुछ आगमोपनिषत्तन्त्र इत्यादि के वाक्यों में पाणिनीय व्याकरण की दृष्टि से परिवर्तन करने का दुस्साहस करना उचित नहीं समझा तथा मानव बुद्धि होने के कारण प्रमादादिवश कुछ अन्य दोषों का भी रह जाना स्वाभाविक है।

इस ग्रन्थ में जो कुछ भी दोष रह गया हो वह मेरा दोष है तथा जो भी सारभूत तत्त्व है वह श्री निग्रहाचार्य जी की साधना का तथा भगवती देवी कामाख्या की कृपा परिणाम है। मेरी यह प्रार्थना है कि इस ग्रन्थ के अध्ययन में सम्मानित विद्वान् पाठकों को यदि कोई दोष दिखे तो उसे हमें सूचित करें, इसके अग्रिम संस्करणों में हम उसके निवारण का प्रयास करेंगे।

सधन्यवाद

विदुषां वशंवदः
आचार्योऽरुणः पाण्डेयः

*-*-*

ॐ असावादित्यो ब्रह्म

# परमाक्षरसूत्रम्

निग्रहाचार्यकृतं ज्ञानवतीटीकासमन्वितम्

निग्रहाचार्यकृतमव्यक्ताद्वैतप्रकाशकं सूत्रविस्तारभाष्यालङ्कृतम्

ज्ञानवतीटीका - पूर्वपीठिका

अव्यक्तञ्च परं ब्रह्म जीवश्चाव्यक्तरूपकः ।
तयोः प्रकाशनार्थञ्च वक्ष्येऽहं परमाक्षरम् ॥

परब्रह्म अव्यक्त हैं एवं जीव का स्वरूप भी अव्यक्त है। उन दोनों को प्रकाशित करने के लिये मैं परमाक्षर (सूत्र) को कहता हूँ।

अथ कस्मात् परमाक्षरमिति कथ्यते ? श्रीकृष्णद्वैपायनवेदव्यासो भगवतीपादतलसंलग्नपङ्कजपटलेषु परमाक्षरसंज्ञकमहाभागवताक्षराणि ददर्श।

मुनिस्तस्य सहस्रेषु दलेषु परमाक्षरम्।
महाभागवतं नाम पुराणं समलोकयत् ॥

तथा चाग्रे,

तथा तत्पङ्कजे दृष्टं पुराणं परमाक्षरम्।
महाभागवतं पुण्यं प्रकाशमकरोत्तथा ॥

(महाभागवते प्रथमाध्याये)

कामरूपे निग्रहे निवसति सति श्रीदेवीपुराणस्य महाभागवतस्य परमाक्षररूपिणः पाठफलजन्यानां परमाक्षरब्रह्मबोधप्रदायकसूत्राणां कामाख्याप्रसादेन स्वानुभूते परमाक्षरमिति नाम्ना कथ्यते।

इसे परमाक्षर क्यों कहा जाता है ? श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास ने भगवती के चरणों के नीचे स्थित कमल की पंखुड़ियों में परमाक्षर

नाम वाले महाभागवत के अक्षरों को देखा था। महाभागवत के प्रथम अध्याय में कहते हैं - 'मुनि (वेदव्यास) ने उस कमल की हजारों पंखुड़ियों में परमाक्षर महाभागवत नामक पुराण को देखा।' आगे कहते हैं - 'उस कमल में पवित्र परमाक्षरसंज्ञक महाभागवत पुराण को उन्होंने जैसा देखा, उसी अनुसार (इस मर्त्य संसार में) उसका प्रकाशन किया।' कामरूप में निग्रह के रहते हुए, परमाक्षररूपी श्रीदेवीपुराण महाभागवत के पाठ के फलस्वरूप, कभी क्षरित न होने वाले परब्रह्म के प्रबोधक सूत्रों को कामाख्या की कृपा से अनभूत करने के कारण इसे 'परमाक्षर', ऐसे नाम से कहा जाता है।

यथा कात्यायन्योपदिष्टो भगवान् वासुदेवः श्रीपद्मिनीदेव्या दर्शनं परमाक्षरयुक्तायाः करोति -

सहस्रदलपद्मान्तर्मध्यस्थानस्थिता सदा।
सखीगणयुता देवी जपन्ती परमाक्षरम्॥
एकाक्षरी महेशानि ! सा एव परमाक्षरा।
कालिका या महाविद्या पद्मिन्या इष्टदेवता॥
(वासुदेवरहस्यान्तर्गते राधातन्त्रे षष्ठपटले)

उसी प्रकार से कात्यायनी देवी के द्वारा उपदेश किये जाने पर भगवान् वासुदेव परमाक्षर से युक्त श्रीपद्मिनी देवी का दर्शन करते हैं। वासुदेवरहस्य में राधातन्त्र के छठे पटल में वर्णन है - हजारों पंखुड़ियों वाले कमल के बीच में सदैव ध्यान में स्थित होकर सखियों के समूह से युक्त होकर परमाक्षर का जप करती हुई देवी (को देखा)। भगवान् शिव देवी पार्वती से कहते हैं - हे महेश्वरी ! इष्टवस्तुओं को देने वाली

(अथवा पद्मिनी की इष्ट) जो कालिका महाविद्या है, वही एकाक्षरी (ॐकाररूपिणी) है और वही परमाक्षरा है।

अथैषा परमा विद्या ययात्मा परमाक्षरमिति रुद्रहृदयोपनिषदि सदुच्यते। अपि चाविच्छिन्नतद्रूपा परमाक्षरेण विग्रहवती भगवतो विश्वमयस्यानवच्छिन्नानुत्तरधाम्नो नित्यशुद्धस्येतीश्वरप्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी।

योगिनाममृतस्थानं व्योमाख्यं परमाक्षरम्।
आनन्दमैश्वरं यस्मान्मुक्तो नावर्त्तते नरः॥
(गरुडपुराणाचारखण्डे)

एवं श्रुतिपुराणागमसम्मतं परमाक्षरं शाक्ताः शैवाः श्रीवैष्णवाश्च जपन्ति।

'यह परमा विद्या है जिसके द्वारा आत्मा परमाक्षर को (जानता है)', ऐसा रुद्रहृदय श्रुति (उपनिषत्) में सत्य कहा जाता है। (यह शक्ति) 'बिना किसी व्यवधान के उसी ब्रह्म के सारूप्य वाली, परमाक्षर से सगुण विग्रह को धारण करती हुई विश्वरूप भगवान् के, जो कभी न रुकने वाले , स्थिर अविनाशी एवं मुख्य परमधाम वाले, नित्य एवं शुद्ध हैं', (उनकी साधिका होती है), ऐसा ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी का कथन है। पुनः, गरुड़पुराण के आचारखण्ड में वर्णन है - 'योगियों का जो अमृतस्थान (जन्ममृत्यु से रहित पद) है, जो आनन्दमय और ईश्वरीय है, जिसके द्वारा व्यक्ति मुक्त हो जाता है एवं पुनः इस संसार में नहीं लौटता, वह व्योम नामक परमाक्षर है।' इस प्रकार से ही वेद, पुराण एवं आगम से सम्मत परमाक्षर को शाक्त, शैव एवं श्रीवैष्णव जपते हैं।

एकदा निग्रहाचार्यो विहरन् धरणीतले।
तपस्यार्थं कामरूपे ध्यायंस्त्रैपुरभैरवीम् ॥१॥
कामाख्यां पूजयन् ध्यायन् स्तुवन् ब्राह्मणसत्तमः।
उवास कतिचित्पक्षानरण्ये घोरदर्शने ॥२॥
प्रातःस्नात्वा ब्रह्मपुत्रे सन्ध्यां कृत्वा यथाविधि।
कोटिसूर्यप्रतीकाशां चन्द्रकोटिसुशीतलाम् ॥३॥
अवलोक्य कामदात्रीं निकटे चिन्तयन् शुभाम्।
स स्तुतिं कर्तुमारेभे भक्त्या परमया ततः ॥४॥

तपस्या के उद्देश्य से पृथ्वी में भ्रमण करते हुए एक बार ब्राह्मणों में श्रेष्ठ निग्रहाचार्य ने कामरूप में त्रिपुरभैरवी का ध्यान करते हुए, कामाख्या की पूजा एवं ध्यान-स्तुति आदि करते हुए कुछ पक्षों तक (प्राथमिक बहुवचन शब्द के अनुसार न्यूनतम डेढ़ महीने तक) भयंकर रूप वाले वन में निवास किया। ब्रह्मपुत्र में प्रातःकाल का स्नान एवं विधिपूर्वक संध्या आदि करके करोड़ों सूर्य (अथवा उगते हुए सूर्य की परिधि) के समान प्रकाशित एवं करोड़ों चन्द्रमा (अथवा उगते हुए चन्द्रमा की परिधि) के समान शीतल, कामनाओं को देने वाली (कामाख्या) का दर्शन करके पास ही उन शुभा का चिन्तन करते हुए फिर परमभक्ति के द्वारा स्तुति करना प्रारम्भ किया।

कामाख्ये वरदे देवि नीलपर्वतवासिनि।
त्वं देवि जगतो माता योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥५॥

हे कामाख्या ! हे वरदा देवी ! हे नीलपर्वत में वास करने वाली ! तुम जगत् की माता हो। हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

मद्रूपधारी शैलस्तु नील इत्युच्यते तथा।
स तु मध्यगतः पीठस्त्रिकोणोलूखलाकृतिः॥
(कामाख्यातन्त्रे नारायणवचनम्)

कामाख्यातन्त्र में भगवान् नारायण का वचन है - जो पर्वत मेरा रूप धारण करता है, उसे नील कहते हैं। कामाख्या पीठ के मध्य में त्रिकोणरूपी ऊखल की आकृति वाला होकर वह स्थित है।

तस्मिन्नीलसंज्ञके शैले या तिष्ठति सा
नीलपर्वतवासिनीत्याह निग्रहः।

निग्रह ने कहा, उस नीलसंज्ञक पर्वत में जो रहती है वह नीलपर्वत-वासिनी है।

योनिरूपा महाविद्या कामाख्या वरदायिनी॥
वरदानन्ददा नित्या महाविभववर्द्धिनी।
सर्वेषां जननी सापि सर्वेषां तारिणी मता॥
(कामाख्यातन्त्रे शिववचनम्)
सा तु कामाख्या वरदाभीष्टदायिनी स्मृता।

कामाख्यातन्त्र में भगवान् शिव का वचन है - योनि का स्वरूप धारण करने वाली महाविद्या वरदान देने वाली कामाख्या है। सबों के वैभव को बढाने वाली वह सदैव अभीष्ट वर एवं आनन्द को देती है। वही सबों को जन्म देने वाली और सबों का उद्धार करने वाली मानी गयी है। वही कामाख्या अभीष्ट वर को देने वाली कही गयी है।

मुद्राविमुक्तहस्तेन क्रियते कर्म दैविकम्।
यदि तन्निष्फलं तस्मात्कर्म मुद्रान्वितश्चरेत्॥
(तृचभास्करे)
मुदं करोति देवानां मनांसि द्रावयन्ति च।
तस्मान्मुद्रा इति ख्याता दर्शितव्या कुलेश्वरि॥
(कुलार्णवतन्त्रे)

मुद्रा से रहित हाथ के द्वारा जो भी दिव्यकर्म किया जाता है वह निष्फल हो जाता है, अतः मुद्रा से युक्त हाथ का आचरण करे, ऐसा तृचभास्कर का वचन है। कुलार्णवतन्त्र का वचन है - देवताओं को प्रसन्न करती है एवं उनके (मन को भक्त के प्रति) द्रवित करती है, इसीलिए हे कुलेश्वरी ! इसे मुद्रा कहते हैं एवं इसका प्रदर्शन करना चाहिये।

कामाख्या तु विश्वोत्पत्तिहेतुभूता योनिरूपा, कथं मुद्रेति ज्ञायते ?

विश्व की उत्पत्ति की कारण, योनिरूपिणी कामाख्या किस प्रकार से मुद्रा के रूप में जानी जाती है ?

क्रियाशक्तिस्तु विश्वस्य मोदनाद्द्रावणात्तथा।
मुद्राख्या सा यदा संविदम्बिका त्रिकलामयी॥
(योगिनीहृदये)

जब तीन कलाओं से युक्त अम्बिका संवित् (ज्ञान) रूपिणी होकर विश्व की क्रियाशक्ति बनती है तथा उसका मोदन एवं द्रावण करती है तो उसे मुद्रा कहते हैं, ऐसा योगिनीहृदय का वचन है।

कीदृशी सा तु योनिमुद्रा ?
द्वौ पाणी प्रसृतीकृत्य कृत्वा तूत्तानमञ्जलिम्।
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यस्य कनिष्ठाग्रद्वयोस्ततः॥
अनामिकायां वामस्य तत्कनिष्ठां पुरो न्यसेत्।
दक्षिणस्यानामिकायां कनिष्ठां दक्षिणस्य च॥
अनामिकायाः पृष्ठे तु मध्यमे विनियोजयेत्।
द्वे तर्जन्यौ कनिष्ठाग्रे तदग्रेणैव योजयेत्॥
योनिमुद्रा समाख्याता देव्याः प्रीतिकरी मता॥
(कालिकापुराणे)

प्रकारान्तरमत्राह
द्वौ पाणी प्रसृतीकृत्य कृत्वा तूत्तानमञ्जलिम्।
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यस्य कनिष्ठाग्रद्वयोस्ततः॥
त्रिकोणे मध्यमे कृत्वा तयोः पृष्ठे अनामिके।
वैपरीत्येन शेषाभ्यां बद्ध्वा योनिं प्रदर्शयेत्॥

वह योनिमुद्रा कैसी है ? कालिका पुराण में कहते हैं - दोनों हाथों को फैलाकर, अंजलि को उठाकर दोनों अंगूठों के अग्रभाग को कनिष्ठा के अग्रभाग से जोड़ दे। बायें हाथ की अनामिका को बायीं कनिष्ठा के सामने जोड़े तथा दाहिने हाथ की अनामिका को दाहिनी कनिष्ठा के सामने जोड़े। अनामिकाओं के पीछे मध्यमाओं को जोड़े, दोनों तर्जनी को कनिष्ठा के आगे जोड़े। देवी को प्रसन्नता देने वाली यह योनिमुद्रा कही गयी है। इसका दूसरा प्रकार यहाँ बताते हैं - दोनों हाथों को फैलाकर, अंजलि को उठाकर दोनों अंगूठों के अग्रभाग को कनिष्ठा के अग्रभाग से जोड़ दे। दोनों मध्यमा के अग्रभाग को त्रिकोण बनाते हुए जोड़ दे तथा उनके पीछे से अनामिका को शेष (तर्जनी) के द्वारा विपरीतयोग से (दाहिने हाथ की अनामिका से को बायें हाथ की तर्जनी से एवं बायें हाथ की अनामिका को दायें हाथ की तर्जनी से) बांधकर योनिमुद्रा का प्रदर्शन करे।

लोके किं विस्तरं तस्याः ?
गुहा मनोभवा तत्र मनोभवविनिर्मिता।
योनिस्तस्यां शिलायां तु शिलारूपा मनोहरा।
वितस्तिमात्रविस्तीर्णा एकविंशाङ्गुलीयुता॥
(कालिकापुराणे)

संसार में उसका क्या विस्तार है ? कालिका पुराण में कहते हैं - वहां (कामरूप क्षेत्र में) कामदेव के द्वारा बनायी गयी मनोभवा नाम की गुफा है जहाँ एक शिला पर उस (देवी) की मन को हरण करने वाली एक बित्ते चौडी एवं इक्कीस अंगुल लम्बी योनि अंकित है।

कामरूपगते कामे कामदेवारिभामिनि ।
कात्यायनि विशालाक्षि योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥६ ॥

कामरूप में गयी हुई, कामा, कामदेव के शत्रु (शिव) की पत्नी, कात्यायनी, विशाल नेत्रों वाली हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है ।

ज्ञानवतीटीका

कास्ति कात्यायनी कामाख्यायाम् ?
कात्यायनी पीठनाम्ना पाददुर्गेति गद्यते ।
नैर्ऋत्यां नीलशैलस्य प्रान्ते सा संस्थिता शिवा ॥
(कालिकापुराणे)

कामाख्या में कात्यायनी कौन है ? कालिका पुराण में वर्णन है - कात्यायनी देवी का पीठोक्त नाम पाददुर्गा है, वह मंगल करने वाली देवी नीलपर्वत के नैर्ऋत्य प्रान्त में संस्थित है ।

अथ कामरूपपीठलक्षणं वक्ष्ये
करतोया नदी पूर्वं यावद्दिक्करवासिनीम् ।
त्रिंशद्योजनविस्तीर्णं योजनैकशतायतम् ॥
त्रिकोणं कृष्णवर्णं च प्रभूताचलपूरितम् ।
नदीशतसमायुक्तं कामरूपं प्रकीर्तितम् ॥
शम्भुनेत्राग्निनिर्दग्धः कामः शम्भोरनुग्रहात् ।
तत्र रूपं यतः प्राप कामरूपं ततोऽभवत् ॥
(कामाख्यातन्त्रे)

अब कामरूपपीठ का लक्षण कहता हूँ। जिसके पूर्वभाग में करतोया नदी है और जिसका दूसरा विस्तार दिक्करवासिनी नदी तक है, जो तीस योजन चौड़ा एवं सौ योजन लम्बा होकर काले रंग के त्रिकोण के समान दिखता है, जो पर्वतों एवं सैकड़ों नदियों से भरा हुआ है, वह कामरूप कहा गया है। शिव के नेत्र की अग्नि से जला हुआ कामदेव शिव की कृपा से यहाँ अपने रूप को पुनः प्राप्त कर लिया अतएव इस क्षेत्र का नाम कामरूप हुआ, ऐसा वचन कामाख्यातन्त्र का है।

तत्र देव्या स्थिति:

योनिपीठं कामगिरौ कामाख्या तत्र देवता।
सर्वत्र विरला चाहं कामरूपे गृहे गृहे॥
(तन्त्रचूडामणौ)
अन्यत्र विरला देवी कामरूपे गृहे गृहे॥
(योगिनीतन्त्रे)

वहाँ देवी की स्थिति कहते हैं - तन्त्रचूडामणि में देवी का कथन है कि कामगिरि में योनिपीठ है जहाँ की देवता कामाख्या हैं। अन्य स्थानों पर मैं कठिनता से प्राप्त होती हूँ किन्तु कामरूप में मेरी स्थिति घर-घर में है। योगिनीतन्त्र में देवी को अन्यत्र विरला होने पर भी कामरूप के घर घर में स्थित बताया गया है।

तत्र देवानां स्थितिभेदे योनिमीमांसा निन्दानिषेधवाक्यञ्च

योनिमध्ये वसेद्देवी योगिन्यश्चिकुरे स्थिताः।
त्रिकोणा च त्रयो देवाः शिवविष्णुपितामहः॥

तस्मान्न निन्दयेद्योनिं यदीच्छेदात्मनो हितम्।
योनिनिन्दां प्रकुर्वाणो सवंशेन विनश्यति॥
(कामाख्यातन्त्रे)

वहां देवताओं की स्थिति के भेद से योनि का वर्णन एवं उसकी निंदा के निषेधवाक्य को कहता हूँ। कामाख्यातन्त्र का वचन है - योनि के मध्य में देवी रहती है, उसके रोमभागों में योगिनीगण स्थित हैं। त्रिकोण में शिव, विष्णु एवं ब्रह्मा, ये तीनों देवता रहते हैं। इस कारण से यदि अपना हित चाहता है तो व्यक्ति को योनि की निंदा नहीं करनी चाहिये। योनिनिंदा करने वाला अपने वंश के साथ नष्ट हो जाता है।

शिवारूढे शवारूढे विश्वारूढेऽपराजिते।
षडास्ये द्वादशभुजे योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥७॥

हे शिव के ऊपर आरूढ़ ! हे शव के ऊपर आरूढ़ ! हे विश्व के ऊपर आरूढ़ ! हे कभी पराजित न होने वाली ! हे छः मुखों एवं बारह भुजाओं वाली ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

कथं सा तु शिवारूढा शवारूढा ?
शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम्॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम्।
महाकालसमायुक्तां शवोपरिरतान्विताम्॥
(मेरुतन्त्रे)

किस प्रकार से वह शिव के ऊपर आरूढ़ एवं शव के ऊपर आरूढ़ हैं ? मेरुतन्त्र का वचन है - शवरूपी महादेव के हृदय के ऊपर स्थित, भयानक शब्द करने वाली लोमड़ियों के द्वारा चारों ओर से घिरी हुई, महाकाल से युक्त एवं शव के ऊपर क्रीडारत (देवी का ध्यान करे) ।

अथ कीदृश: शवशिवात्मको महाकाल: ? तस्य विग्रहवर्णनम्,

धूम्रवर्णं महाकालं जटाभारान्वितं यजेत्।
त्रिनेत्रं शिवरूपञ्च शक्तियुक्तं निरामयम्॥
दिगम्बरं घोररूपं नीलाञ्जनचयप्रभम्।
निर्गुणञ्च गुणाधारं कालीस्थानं पुनः पुनः॥
(निरुत्तरतन्त्रे)

शव एवं शिवरूपी महाकाल कैसे हैं, उनके स्वरूप का वर्णन निरुत्तरतन्त्र में करते हैं - धुवें के समान रंग वाले, जटा के भार से युक्त महाकाल का पूजन करे। उनका रूप कल्याणकारी है, वे तीन नेत्रों वाले हैं, अपनी शक्ति से युक्त हैं तथा रोग आदि से रहित हैं। वे दिशाओं को ही वस्त्र के रूप में धारण करके घोररूप वाले, नीले एवं काले काजल के ढेर के समान प्रभा वाले हैं। वे निर्गुण होकर भी सभी गुणों के आधार हैं, काली देवी के आधारस्थान हैं, उनका बारम्बार पूजन करे।

एकाक्षरस्य शक्तिध्यानं चापि,

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां वरप्रदाम्।
हास्ययुक्तां त्रिनेत्राञ्च कपालकर्तृकारकाम्॥
(सिद्धेश्वरतन्त्रे)

एकाक्षर की शक्ति का ध्यान भी सिद्धेश्वरतन्त्र में कहते हैं - शव पर आरूढ़, अत्यन्त भयानक, विकराल दांतों वाली एवं वरदान को देने वाली, मुस्कुराती हुई, तीन नेत्रों से युक्त, कपाल को (धारण) करने वाली अथवा संहाररूपिणी होकर कपालक्रिया को करने वाली (देवी का ध्यान करे)।

अक्षरं ब्रह्म परममिति श्रीमद्भगवद्गीतावाक्यानुसारेण एकाक्षरमेव परमाक्षरं तथा वेदेषु च,

धाता विधाता पवनः सुपर्णो विष्णुर्वराहो रजनीरहश्च।
भूतं भविष्यत्प्रभवः क्रियाश्च कालः क्रमस्त्वं परमाक्षरञ्च॥
(एकाक्षरोपनिषत्)

'अक्षरं ब्रह्म परमम्' आदि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यानुसार एकाक्षर ही परमाक्षर है। वेदों में भी यह बात कही गयी है। एकाक्षरोपनिषत् का वचन है - तुम ही पालन करते हो, तुम ही निर्धारण करते हो, तुम ही वायु और सुन्दर पंखों वाले गरुड़ हो। तुम ही विष्णु, वराह, रात्रि और दिन हो। तुम ही भूत, भविष्य, प्रभव-क्रिया-काल (सृष्टि-स्थिति-संहार) हो, तुम ही इनका क्रम हो और तुम ही परमाक्षर हो।

पुनश्च, *वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम्* इति देव्या ध्यानं *विश्वसारतन्त्रे* ।

इदानीं च महादेव मम पादतले सदा।
तिष्ठ त्वं शवरूपेण मम ह्यासनतां व्रज॥
(योगिनीतन्त्रे)

यत्र यत्र तवेदं हि कालीरूपं मनोहरम् ।
आविर्भवति तत्रैव शिवरूपस्य मे हृदि ॥
संस्थातव्यं त्वया लोके ख्याता च शववाहना ।
भविष्यसि महाकाली प्रसीद जगदम्बिके ॥
(महाभागवते शिवप्रार्थितो वरः)

और फिर, 'बायें पैर को शव के हृदय में स्थापित करके दाहिने पैर वाली', इस प्रकार से देवी का ध्यान विश्वसारतन्त्र में बताया गया है। योगिनीतन्त्र में देवी का वचन है - 'हे महादेव ! अब आप सदैव मेरे पैरों के नीचे स्थित रहें एवं शवरूप से आप मेरे आसन बनें।' महाभागवत में भगवान् शिव के द्वारा देवी से ऐसे ही वर की याचना की गयी है - 'हे महाकाली ! जहाँ जहाँ आपका यह मनोहर काली रूप प्रकट हो, वहां मुझ शिवरूप के हृदय में आपको स्थापित होना चाहिए तथा संसार में शववाहना के रूप में आपकी प्रसिद्धि होगी। हे संसार की माता ! आप प्रसन्न हों।'

अथ कथं सा विश्वारूढा ?
विश्वं सर्वं सृजति सा कोऽपि सृजति तां न हि।
सा पालयति संसारं तां पालयति कोऽपि न।
तां न संहरते कोऽपि सा सर्वं संहरत्यतः ॥
(महाकालसंहितायाम्)

अब किस प्रकार से विश्व पर आरूढ़ है ? महाकालसंहिता में कहते हैं - वह पूरे विश्व की रचना करती है किन्तु उसकी रचना कोई नहीं

करता। वह पूरे संसार का पालन करती है किन्तु उसका पालन कोई नहीं करता। उसका संहार भी कोई नहीं कर पाता अपितु वही सबों का संहार करती है, इसीलिए विश्वारूढा है।

दुराराध्याल्पभाग्यैश्च देवी विश्वेश्वरी शिवा।
वेदगर्भा विशालाक्षी सर्वेषामादिरीश्वरी॥
एषा संहृत्य सकलं विश्वं क्रीडति संक्षये।
लिङ्गानि सर्वजीवानां स्वशरीरे निवेश्य च॥
सर्वबीजमयी ह्येषा राजते साम्प्रतं सुरौ।
(श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणे विष्णोर्वचनम्)

'ये विश्वेश्वरी कल्याणी भगवती अल्पभाग्य वाले प्राणियों के लिये दुराराध्या हैं। ये वेदजननी विशालनयना जगदम्बा सबकी आदिस्वरूपा ईश्वरी हैं। ये भगवती प्रलयावस्था में समग्र विश्व का संहार करके सभी प्राणियों के लिङ्गरूप शरीर को अपने शरीर में समाविष्ट करके विहार करती हैं। ये भगवती इस समय सर्वबीजमयी देवी के रूप में विराजमान हैं', ऐसा श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण में विष्णु का वचन है।

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वमिति *मार्कण्डेयपुराणोक्तसप्तशतीसंहितायाम्*।

'हे विश्व की स्वामिनी ! तुम विश्व की रक्षा करती हो, विश्वरूपिणी होकर विश्व को धारण करती हो', ऐसा मार्कण्डेयपुराण में कही गयी दुर्गासप्तशती में है।

एवमन्येऽपि ये भावाः सात्विका राजसास्तथा।
तामसा मत्त उत्पन्ना मदधीनाश्च ते मयि।
नाहं तेषामधीनास्मि कदाचित् पर्वतर्षभ॥
(महाभागवते पार्वतीगीतायां हिमालयं प्रति देव्या वचनम्)

'हे पर्वतों में श्रेष्ठ ! इस प्रकार से अन्य जो सात्विक, राजस एवं तामस भाव हैं, वह मुझसे ही उत्पन्न हुए हैं, मेरे अधीन होकर मुझमें ही रहते हैं। मैं कभी भी उनके अधीन नहीं हूँ', ऐसा महाभागवत की पार्वतीगीता में हिमालय के प्रति देवी का वचन है।

प्रभिन्नाञ्जनसङ्काशां नीलस्निग्धशिरोरुहाम्।
षड्वक्त्रां द्वादशभुजामष्टादशविलोचनाम्॥
(कालिकापुराणे)

कालिकापुराण में कहते हैं - विशाल पर्वत के समान कलेवर, नीले रंग के चिकने केशों से युक्त, छः मस्तक, बारह भुजा एवं अठारह नेत्रों वाली (देवी का ध्यान-पूजन करे)।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्रि त्वं गुह्यकुण्डान्तगेहिनी।
गुह्याद्गुह्यतरे गुह्ये योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥८॥

हे गुह्य से भी अतिगुह्य की रक्षा करने वाली ! तुम गहरे और गुप्त कुण्ड के अन्त में रहती हो। हे गुह्य से भी अधिक गुह्य ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

अथ कस्माद्गुह्येति निगद्यते ?

सूक्ष्मातिसूक्ष्मं सलिलस्य मध्ये विश्वस्य स्त्रष्ट्रीमनेकाननाख्याम् ।
विश्वस्य चैकां परिवेष्टयित्रीं ज्ञात्वा गुह्यां शान्तिमत्यन्तमेति ॥
(गुह्योपनिषत्)

अपि च श्रुतिः,

निष्कलां निष्क्रियां शान्तां निरवद्यां निरञ्जनाम् ।
बह्वाननकरां देवीं गुह्यामेकां समाश्रये ॥
(गुह्योपनिषत्)

किस प्रकार से 'गुह्या', ऐसी कही जाती है ? गुह्योपनिषत् का वचन है - सूक्ष्म से भी अधिक सूक्ष्म जल के बीच में रहने वाली, विश्व की रचना करने वाली, अनेकों मुखों वाली, विश्व को चारों ओर से घेरने वाली एकमात्र गुह्या को जानकर शान्ति को प्राप्त करता है।
गुह्योपनिषत् में और भी श्रुति है - कला से रहित, क्रिया से रहित, शान्त, पाप से रहित, अज्ञान से रहित, बहुत से मुख एवं हाथों वाली एक गुह्या देवी का मैं आश्रय लेता हूँ।

**मा**याङ्गस्थितचक्रस्थे भीमपुत्रेण पूजिते ।
आगमैर्निगमैर्वन्द्ये योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥९॥

हे मायांग में स्थित चक्र में रहने वाली ! भीम के पुत्र के द्वारा पूजित ! आगम एवं निगम के द्वारा वन्दित होने वाली ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

मायाङ्गनाम्नि कामरूपक्षेत्रस्थितप्रान्तविशेषे भीमात्मजस्य राक्षसेन्द्रस्य घटोत्कचस्य शासनमासीत्। स तु मायाविनां वरः कामाख्योपासको बभूव। बङ्गाहोमलोकभाषायां 'मायोंग' इति कथ्यते।

कामरूपक्षेत्र के मायांग नाम वाले प्रान्तविशेष में भीमपुत्र राक्षसराज घटोत्कच का शासन था। वह मायावियों में श्रेष्ठ, कामाख्या का उपासक हुआ था। बंगाल एवं आसाम की क्षेत्रभाषा में 'मायोंग', ऐसा कहा जाता है।

निश्चयेन बोधेन च निगमो वेदस्तेनाराधितायै देव्यै नमः। यथोक्तमस्ति,

माताहं सर्ववेदानां वेदैः सर्वैरलङ्कृता।
जप्त्वा मां परमां सिद्धिं पश्यन्ति द्विजसत्तमाः॥
(स्कन्दपुराणे प्रभासखण्डे देव्या वाक्यम्)

गायत्री छन्दसां माता ब्रह्मयोनिः प्रतिष्ठितेति *नृसिंहपुराणे*।

निश्चय कराने एवं बोध कराने से वेद को निगम कहते हैं, उनके द्वारा आराधिता देवी को नमस्कार है। जैसा कि कहा गया है - 'मैं सभी वेदों की माता हूँ, सभी वेदों के द्वारा अलंकृत हूँ। मुझे जपकर ब्राह्मणों

में श्रेष्ठ जन परम सिद्धि का दर्शन करते हैं।' ऐसा स्कन्दपुराण के प्रभासखण्ड में देवी का वाक्य है। नृसिंहपुराण का कथन है कि गायत्री वेदों की माता और ब्रह्मज्ञान की योनिरूप से प्रतिष्ठित है।

परमानन्दराशिश्च स्वयं मूर्तिमती सती।
श्रुतिभिः कीर्तिता तेन परमानन्दरूपिणी॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

ब्रह्मवैवर्तपुराण में कहते हैं - 'देवी सती का जो सगुण मूर्तिकलेवर है, वह परमानन्द का समूह है। श्रुतियों के द्वारा उसकी कीर्ति का गान हुआ है, अतः वह देवी परमानन्दरूपिणी है।'

कस्मादागम उच्यते ?
आगत: शिववक्त्रेभ्यो गतश्च गिरिजामुखम्।
मतश्च वासुदेवेन चागमन्तेन कथ्यते॥
(आगमतत्त्वविलासे)
पुनश्च, यामलादितन्त्रान्तरेषु
आगतं शिववक्त्रेभ्यो गतञ्च गिरिजाश्रुतौ।
मतं श्रीवासुदेवस्य तस्मादागम उच्यते॥

क्यों आगम कहा जाता है ? आगमतत्त्वविलास में कहते हैं - शिव जी के मुख से आया और गिरिजा के मुख में गया, वासुदेव के द्वारा समर्थित हुआ इसीलिए आगम, ऐसा कहा जाता है। पुनः, यामल आदि अन्य तन्त्रों में कहते हैं - शिव जी के मुख से आया और गिरिजा

के कान में गया, श्रीवासुदेव के द्वारा समर्थित हुआ, इसीलिए आगम कहा जाता है।

आगच्छन्ति बुद्धिमारोहन्ति अभ्युदयनिःश्रेयसोपाया यस्मात् स आगम इति *वाचस्पत्यतत्त्ववैशारदीटीकायाम्*।

आकर बुद्धि में आरूढ होते हैं, उन्नति एवं कल्याण के निमित्त बनते हैं, इस कारण से आगम कहलाते हैं, ऐसा वाचस्पति की तत्त्ववैशारदी टीका में है।

वसुन्धरात्मजं दैत्यं सञ्जघानातिजित्वरम्।
कृष्णान्तरे स्थिता भूत्वा योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१० ॥

पृथ्वी का पुत्र दैत्य, जो अत्यन्त पराक्रमी था, उसे श्रीकृष्ण के अंदर स्थित होकर मार डाला। हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

यज्ञवाराहवीर्येण नरकनामाख्यं सुतं सुषुवे धरा। स तु विष्णोराज्ञया प्राग्ज्योतिषपुराधिपतिः कामरूपनृपतिश्च बभूव। तं बाणमित्रं क्रूरकर्माणं शक्रचोदितश्च श्रीकृष्णः कामाख्यासंयुतो भूत्वा समरे निजघान।

यज्ञवाराह के वीर्य से पृथ्वी ने नरक नामक पुत्र को जन्म दिया। वह विष्णु की आज्ञा से प्राग्ज्योतिषपुर का स्वामी और कामरूप का राजा

बना। बाणासुर के उस क्रूरकर्मा मित्र को इन्द्र की प्रेरणा से श्रीकृष्ण ने कामाख्या से युक्त होकर युद्धभूमि में मारा।

स तेन युयुधे वीरो विष्णुना प्रभविष्णुना।
प्राग्ज्योतिषाधिपो भीमो नरकः पृथिवीसुतः॥
सोऽयुद्ध्यत्कृष्णनिकटे कालिकां कालिकोपमाम्।
रक्तास्यनयनां दीर्घां खड्गशक्तिधरां तदा॥
अपश्यज्जगतां धात्रीं कामाख्यामपि मोहिनीम्॥
स विस्मितस्तदा भीतस्तां दृष्ट्वा जगतां प्रसूम्।
योद्धव्यमित्येव तदा युयुधे नरकोऽसुरः॥
तेन सार्द्धं तदा कृष्णः कृत्वा सुमहदद्भुतम्।
युद्धं यादृग्पुरा भूतं न देवे न च मानुषे॥
ततस्तेनाथ भौमेन युद्धकेलिं स माधवः।
चिरं कृत्वा जघानाथ देवेन्द्रं प्रतिहर्षयन्॥
(कालिकापुराणे)

कालिका पुराण का वचन है - 'प्राग्ज्योतिष के स्वामी, भयंकर, पृथ्वीपुत्र, उस नरक ने प्रभावशाली विष्णु के साथ युद्ध किया। युद्ध करते हुए उसने कृष्ण के सामने ही काले रंग की कालिका को देखा जिनके मुख एवं नेत्र लाल थे, शरीर विशाल था एवं उन्होंने खड्ग तथा शक्ति को धारण किया हुआ था। मोहित करने वाली उस जगन्माता कामाख्या को देखकर वह आश्चर्यचकित होकर भयभीत हो गया किन्तु युद्ध तो करना ही है, ऐसा सोचकर नरकासुर युद्ध करने लगा। उसके

बाद उसके साथ कृष्ण ने महान् एवं अद्भुत युद्ध किया जैसा पहले न देवताओं और न ही मनुष्यों में देखा गया था। फिर माधव ने देवराज इन्द्र को प्रसन्न करते हुए भौमासुर के साथ कुछ देर तक युद्धक्रीडा करके उसे मार डाला।'

ब्रह्मपुत्रेणार्चिते च सुन्दरे पादपङ्कजे।
कैवल्यदायिनि दिव्ये योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥११॥

तुम्हारे चरणकमल ब्रह्मपुत्र के द्वारा अर्चित हैं। हे कैवल्य देने वाली दिव्य योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

स्वयमेव नारायणो द्रवीभूय शान्तनोरंशेन ब्रह्मणाराधितो
जामदग्निनाकर्षितो लौहित्यनामा महानदो बभूव।
ब्रह्महापि नरः सद्यो मुच्यते भवबन्धनात्।
ब्रह्मपुत्रः स्वयं साक्षाद्द्रवरूपी जनार्दनः॥
तस्मिन्नेव कृतस्नानो मुच्यते सर्वपातकात्।
(महाभागवते)

स्वयं नारायण ही जल का रूप धारण करके शान्तनु के अंश से, ब्रह्मा के द्वारा आराधित एवं परशुराम के द्वारा खींचे जाकर लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) नाम का महानद बन गये। महाभागवत का वचन है - 'ब्रह्महत्यारा भी तत्काल संसार के बन्धन से मुक्त हो जाता है, ब्रह्मपुत्र

साक्षात् जलरूपी नारायण हैं। उसमें ही स्नान करके व्यक्ति सभी पातकों से मुक्त हो जाता है।'

लौहित्यात्सरसो जातो लौहित्याख्यस्ततोऽभवत्॥
स कामरूपमखिलं पीठमाप्लाव्य वारिणा।
गोपयन्सर्वतीर्थानि दक्षिणं याति सागरम्॥
(कालिकापुराणे)

'लौहित्य' नाम के सरोवर से निकलने के कारण लौहित्य नाम वाला हुआ। वह सम्पूर्ण कामरूप पीठ को जल से आच्छादित करके वहां स्थित सभी तीर्थों को गुप्त करता हुआ दक्षिण दिशा की ओर समुद्र में जाता है', ऐसा कालिका पुराण का वचन है।

कालिके षोडशि तारे भैरवि बगलामुखि।
भुवनेशि जगन्मातर्योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१२॥
मातङ्गि छिन्नमस्ते च धूमे केशववल्लभे।
दाक्षायणि महाविद्ये योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१३॥

कालिका, षोडशी, तारा, भैरवी, बगलामुखी और भुवनेश्वरी (के नाम से प्रसिद्ध), हे संसार की माता ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है। मातंगी, छिन्नमस्ता, धूमावती, केशववल्लभा (लक्ष्मी या कमला), दाक्षायणी (सती) नाम वाली महाविद्या ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

यां दशरूपिणीं महाविद्याख्यां शक्तिं मुमुक्षवः स्मरन्ति
तस्याः कामरूपे स्थितिः -

कामाख्या कालिका देवी स्वयमाद्या सनातनी।
तस्या: पार्श्वे स्थिताश्चान्या नव विद्या महामते॥
सर्वविद्यात्मिका काली कामाख्यारूपिणी यतः।
ततस्तां तत्र सम्पूज्य पूजयित्वेष्टदेवताम्।
इष्टमन्त्रं जपेद्भक्त्या सिद्धमन्त्रो भवेत्तदा॥
(महाभागवते नारदं प्रति महादेवस्य वचनम्)

जिस दस रूपों वाली महाविद्या नाम की शक्ति का स्मरण मोक्ष की इच्छा रखने वाले लोग करते हैं, उसकी कामरूप में स्थिति इस प्रकार है। महाभागवत उपपुराण में नारद के प्रति महादेव का वचन है - 'हे महामते ! कामाख्या स्वयं सनातनी और सबकी पूर्वजा कालिका देवी हैं। उनके बगल में अन्य नौ विद्यायें स्थित हैं। सभी विद्याओं का एकीकृत विग्रह कामाख्या का रूप धारण करने वाली काली हैं, अतएव वहां (कामरूप) में पहले उनकी पूजा करके फिर अपने इष्टदेवता का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार से भक्तिपूर्वक इष्ट के मन्त्र का जप करने से मन्त्र की सिद्धि से युक्त होता है।'

ततो नवविद्यास्थितिभेदः -

वामे तारा भगवती दक्षिणे भुवनेश्वरी।
अग्नौ तु षोडशीविद्या नैर्ऋत्यां भैरवी स्वयम्॥

वायव्यां छिन्नमस्ता च पृष्ठतो बगलामुखी।
ऐशान्यां सुन्दरी विद्या चोर्ध्वमातङ्गनायिका॥
याम्यां धूमावती विद्या महापीठस्य नारद।
अधस्ताद्भगवान्रुद्रो भस्माचलमयः स्वयम्॥
ब्रह्मविष्णुमुखाश्चान्ये देवाः शक्तिसमन्विताः।
सदा सन्निहितास्तत्र पीठे लोके सुदुर्लभे॥
(महाभागवते नारदं प्रति महादेवस्य वचनम्)

वहां पर अन्य नौ विद्याओं की स्थितिभेद के सन्दर्भ में महाभागवत में ही नारद के प्रति महादेव का वचन हैं - 'बायें भाग में भगवती तारा है, भुवनेश्वरी दाहिने हैं। आग्नेय कोण में षोडशी नाम की विद्या है और नैर्ऋत्य में स्वयं भैरवी हैं। वायव्य कोण में छिन्नमस्ता और पीछे की ओर बगलामुखी हैं। ऐशान्य में त्रिपुरसुन्दरी तथा ऊपर की ओर मातंगी हैं। हे नारद ! महापीठ की दक्षिण दिशा में धूमावती हैं तथा नीचे स्वयं भस्माचल का रूप धारण किये हुए भगवान् रुद्र हैं। ब्रह्मा और विष्णु की प्रधानता वाले अन्य जो भी देवता हैं, वे सभी अपनी अपनी शक्ति के साथ संसार में अत्यन्त दुर्लभ उस पीठ में सदैव सन्निहित रहते हैं।'

महाकालगणाधीशेनोमानन्दादिभैरवैः।
कपीन्द्रेणार्चिते सौम्ये ! योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१४॥
कोटिलिङ्गेन संयुक्ते सिद्धीश्वरविनायकैः।
भूतनाथेन सम्पूज्ये योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१५॥

महाकाल-गणेश एवं उमानन्द आदि भैरवों के द्वारा, कपीन्द्र के द्वारा पूजित हे सौम्यरूपा ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है। कोटिलिंग से युक्त, सिद्धि के स्वामी विनायकों तथा भूतनाथ के द्वारा पूजित हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

पाण्डुनाथोपरि महाकालाख्यो गणेश्वरो वर्तते।
उमानन्दनाम्ना पीठाधीश्वरभैरवः कथ्यते।
योनिपीठं कामगिरौ कामाख्या तत्र देवता।
यत्रास्ते त्रिगुणातीता रक्तपाषाणरूपिणी॥
यत्रास्ते माधवः साक्षादुमानन्दोऽथ भैरवः।
सर्वदा विहरेद्देवी तत्र मुक्तिर्न संशयः॥
(तन्त्रचूडामणौ)

पाण्डुनाथ के ऊपर महाकाल नाम वाले गणेश्वर हैं। उमानन्द नाम से पीठ के अधिपति भैरव को कहा जाता है। तन्त्रचूडामणि का वचन है - 'कामगिरि में योनिपीठ है, वहाँ की देवता कामाख्या हैं। जहाँ तीनों गुणों से परे, लाल पत्थर का रूप धारण करने वाली कामाख्या है, जहाँ साक्षात् माधव ही उमानन्द नामक भैरव हैं, जहाँ सदैव देवी विहार करती हैं, वहाँ मुक्ति में कोई संशय नहीं है।'

अथानन्तरं पश्चिमभागे बालकहनुमानिति लोके ख्यात आञ्जनेयस्सगणाधीश्वरो नारदकेशवाभ्यां विशालपाषाणमाश्रित्य

ब्रह्मपुत्रतटे स्थितः। तस्मिन्नेव हनुमान्पीठे निवसन्
निग्रहाचार्यस्तपस्तेपे सूत्राणि चापि लेभे।
योऽसौ नन्दी मम तनुः स तु पाषाणरूपधृक्।
संस्थितः पश्चिमद्वारि हनुमान्पीठनामतः॥
(कालिकापुराणे)

अब इसके अतिरिक्त पश्चिम भाग में बालक-हनुमान् के नाम से संसार में प्रसिद्ध, अंजनापुत्र हनुमान् जी हैं जो गणेश, नारद एवं विष्णु के साथ विशाल पत्थर का आश्रय लेकर ब्रह्मपुत्र के किनारे स्थित हैं। इसी हनुमान्-पीठ में रहते हुए निग्रहाचार्य ने तपस्या की और सूत्रों को भी प्राप्त किया। कालिका पुराण का वचन है - 'यह जो नन्दी मेरा ही स्वरूप है, वह पत्थर का रूप धारण करके पश्चिम द्वार में हनुमान्-पीठ के नाम से स्थित है।'

तथैव पार्षदरूपेण सिद्धिगणेशश्च श्मशानाधिपतिः पातालभैरववृतो भूतनाथः स्मर्तव्यः। श्रीनृसिंहनिग्रहलीलावसान आकाशभैरवाख्या या शैवी शरभमूर्तिरासीत् सैव कोटिलिङ्गनाम्ना ज्ञेया।
योऽसौ शरभमूर्तिर्मे मध्यखण्डप्रचण्डकः।
महाभैरवनामाभूत् कोटिलिङ्गाह्वयस्तु सः॥
(कालिकापुराणे)

उसी प्रकार से पार्षदरूप से सिद्धिगणेश एवं पातालभैरव से घिरे हुए श्मशान के स्वामी भूतनाथ भी स्मरणीय हैं। श्रीनृसिंह के निग्रह की लीला के समाप्त होने पर शिव की आकाशभैरव नाम वाली जो

शरभमूर्ति थी, वही कोटिलिंग के नाम से जानी जाती है। कालिका पुराण में कहते हैं - 'ये जो मेरी शरभमूर्ति है, इसका प्रचण्ड मध्यखण्ड महाभैरव के नाम से होकर कोटिलिंग बना है।'

ब्रह्मविद्येऽपराविद्ये पराविद्ये परात्मिके।
योगदे भोगदे भामे योनिमुद्रे ! नमोऽस्तु ते ॥१६॥

ब्रह्मविद्या ! अपराविद्या ! पराविद्या ! परात्मिका ! योग को देने वाली ! भोग को देने वाली ! क्रोध करने वाली ! हे योनिमुद्रा ! तुम्हारे लिये प्रणाम है।

ज्ञानवतीटीका

सा तु ब्रह्मविद्या इति स्तुता।
त्वं ब्रह्मविद्या विद्यानां महानिद्रा च देहिनाम्।
स्कन्दमातर्भगवति दुर्गे कान्तारवासिनि॥
(महाभारते)

वह 'ब्रह्मविद्या', इस प्रकार से स्तुत है। महाभारत में कहते हैं - ' हे स्कन्द की माता, ऐश्वर्यशालिनी, दुर्गम स्थानों में निवास करने वाली दुर्गे ! तुम देहधारियों की महानिद्रा हो एवं विद्याओं में ब्रह्मविद्या हो।'

सा तु सर्वविद्याप्रधाना।
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह।
(मुण्डकोपनिषत्)

वह सभी विद्याओं में प्रधान है। मुण्डकोपनिषत् में कहते हैं - 'उसने सभी विद्याओं में स्थित ब्रह्मविद्या को अपने ज्येष्ठपुत्र अथर्व को कहा।'

विद्यानां ब्रह्मविद्या त्वमोङ्कारोऽथ वषट् तथा॥

(हरिवंशपुराणे विष्णुपर्वणि)

हरिवंशपुराण के विष्णुपर्व का वचन है - 'तुम विद्याओं में ब्रह्मविद्या हो, तुम ॐकार एवं वषट् हो।'

कथं वै सापरा परा च ?

द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति परा चैवापरा च॥

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः

शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति।

अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते॥

(मुण्डकोपनिषत्)

किस प्रकार से वह अपरा और परा है ? मुण्डकोपनिषत् का वचन है - 'दो विद्याओं को जानना चाहिये, जिन्हें ब्रह्मवेत्ता कहते हैं - परा और अपरा। वहाँ ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष् अपरा हैं। जिससे अविनाशी ब्रह्म को जाना जाता है, वह परा है।'

कथं सा तु परात्मिका ?

देवाराध्या पराराध्या ब्रह्माराध्या परात्मिका॥

(नारदपुराणे राधाकृष्णसहस्रनाम्नि)

किस प्रकार से परात्मिका है ? नारद पुराण के राधाकृष्णसहस्रनाम में कहते हैं - 'देवताओं के द्वारा आराधित, उनसे भी श्रेष्ठ पराविद्या के द्वारा आराधित, ब्रह्म के द्वारा आराधित, परात्मिका है।'

कथं योगदा भोगदाथवा ?

अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्यवर्जिता ।
योगिनी योगदा योग्या योगानन्दा युगन्धरा ॥
(ललितासहस्रनाम्नि)

राज्यदा राज्यकामस्य भोगकामस्य भोगदा ॥
(जयाख्यसंहितायां वागीश्वरीप्रकरणे)

सिद्धिप्रदा भोगदा च तेन सिद्धेश्वरी स्मृता ॥
(वराहपुराणे)

योगं भोगञ्च वीरञ्च शक्तिरेव त्रिधा भवेत् ॥
(सूक्ष्मागमे)

किस प्रकार से योगदा अथवा भोगदा है ? ललितासहस्रनाम में कहते हैं - 'अदृश्या है, दृश्य से रहित है, विशेष ज्ञान को जानने वाली है किन्तु स्वयं जिसे नहीं जाना जा सकता, योगिनी है, योग को देने वाली है, योग्य है, योगजन्य आनन्द से युक्त है एवं युग को धारण करने वाली है।' जयाख्यसंहिता के वागीश्वरी-प्रकरण में कहते हैं - 'राज्य की कामना करने वाले को राज्य देती है, भोग की कामना करने वाले को भोग देती है।' वराह पुराण का वचन है - 'सिद्धि देने वाली है, भोग प्रदान करने वाली है, अतएव सिद्धेश्वरी कही गयी है।' सूक्ष्मागम का वचन है - 'शक्ति ही योग, भोग एवं वीरभाव से तीन प्रकार की होती है।'

अपि च,

या देवता भोगकरी सा मोक्षाय न कल्पते।
मोक्षदा न हि भोगाय त्रिपुरा तु द्वयप्रदा॥
(त्रिपुरातन्त्रे)

त्रिपुरातन्त्र का वचन है - 'जो देवता भोग देती है, उसकी उपासना मोक्ष हेतु नहीं की जाती, मोक्ष देने वाली भोग नहीं देती किन्तु त्रिपुरा दोनों प्रदान करती है।'

सुधाकूपारान्तस्त्रिदशतरुवाटीविलसिते
मणिद्वीपे चिन्तामणिमयगृहे चित्ररुचिरे।
विराजन्तीमम्बां परशिवहृदि स्मेरवदनां
नरो ध्यात्वा भोगं भजति खलु मोक्षञ्च लभते॥
(स्कन्दपुराणे मानसखण्डे)

स्कन्दपुराण के मानसखण्ड में वर्णित है - 'अमृतसागर के तट पर कल्पवृक्ष की वाटिका से सुशोभित मणिद्वीप में स्थित बहुवर्णचित्रित चिन्तामणिमय भवन में तथा परमशिव के हृदय में विराजमान रहने वाली और मन्द मन्द मुस्कानयुक्त मुखमण्डल वाली जगदम्बा का ध्यान करके मनुष्य सांसारिक सुखों का उपभोग करता है और अन्त में निश्चय ही मोक्ष प्राप्त करता है।'

कथं वैषम्ये योगभोगौ समन्वितौ ?
भोगप्रयोगाच्च्युतस्य मोक्षं मोक्षप्रयोगाच्च्युतस्य

भोगमुभयापेक्षस्योभयं तत्राप्यादौ भोगं पश्चान्मोक्षं
प्रददातीत्यर्थः ॥
(सौभाग्यभास्करभाष्ये)

परस्पर विषमता होने से योग एवं भोग का समन्वय कैसे होगा ? सौभाग्यभास्करभाष्य में कहते हैं - 'भोग के प्रयोग से च्युत को मोक्ष देती है, मोक्ष के प्रयोग से च्युत को भोग देती है, दोनों की कामना वाले को दोनों देती है, उसमें भी पहले भोग और फिर मोक्ष देती है, ऐसा अर्थ है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति -
यत्रास्ति मोक्षो न च तत्र भोगो यत्रास्ति भोगो न च तत्र मोक्षः ।
श्रीसुन्दरीसेवनतत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ॥

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - जहाँ मोक्ष है, वहाँ भोग नहीं है। जहाँ भोग है, वहाँ मोक्ष नहीं है। किन्तु श्री त्रिपुरसुन्दरी की सेवा में लगे हुए भक्तों के लिये भोग एवं मोक्ष, दोनों ही करगत होते हैं।

एवं स्तुवन् महादेवीं मगः खण्डाग्रदन्तुरः ।
अतिष्ठद्ब्रह्मजिज्ञासुः सा प्रसन्नाभवत्तदा ॥१७॥
तदा निग्रहचित्ते तु वागुवाचाशरीरिणी ।
ददामि निर्मलं ब्रह्मज्ञानं तुभ्यं मुखात्मज ॥१८॥

इस प्रकार से महादेवी की स्तुति करते हुए '*खण्डाग्रदन्तुर मग*' वहीं पर ब्रह्म की जिज्ञासा करते हुए स्थित रहे, तब वह देवी प्रसन्न हो गयी। फिर निग्रहाचार्य के चित्त में अदृश्य वाणी ने कहा - 'हे मुख से उत्पन्न ! तुम्हें मैं निर्मल ब्रह्मज्ञान देती हूँ।'

ज्ञानवतीटीका

किञ्चित् खण्डितोऽस्त्यग्रदन्तो यस्य स खण्डाग्रदन्तुरः।
मग इति शाकद्वीपीयविप्राणां विशेषणम्, कथमिति ?
त्र्यक्षरं च तमोङ्कारं सार्धमात्रात्रये स्थितम्॥
वदन्ति चार्धमात्रस्थं मकारं व्यञ्जनात्मकम्।
ध्यायन्ति ये मकारीयं ज्ञानं ते हि सदात्मकम्॥
मकारो भगवान्देवो भास्करः परिकीर्तितः।
मकारध्यानयोगाच्च मगा ह्येते प्रकीर्तिताः॥
(भविष्यपुराणे ब्राह्मपर्वणि)

जिसका सामने का दांत कुछ टूटा हुआ हो, वह '*खण्डाग्रदन्तुर*' है। '*मग*' शाकद्वीपीय ब्राह्मणों का विशेषण है। ऐसा क्यों है ? भविष्य पुराण के ब्राह्मपर्व का वचन है - 'तीन अक्षर वाले ओंकार को, जिसमें साढ़े तीन मात्रा स्थित है, उसमें जो सत्यरूप मकारीय ज्ञान का ध्यान करते हैं, वे आधी मात्रा को व्यंजनात्मक मकार कहते हैं। भगवान् सूर्य को मकार कहा गया है। मकारध्यान से युक्त होने के कारण ये (शाकद्वीपीय) मग कहे गए हैं ।'

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीदिति श्रुतिमन्त्रेण मुखात्मजः। चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगदिति देवस्तुत्या सा तु

प्राणिनामन्तरे चितिरूपा। तस्मिन्नेव निग्रहे चितिसंवादमाश्रित्य परमाक्षरसूत्रमुपदिशति।

ब्राह्मण इस विराट् पुरुष का मुख हुए, इस श्रुति मन्त्र से मुखात्मज का अर्थ ब्राह्मण है। जो चितिरूप से सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है, इस प्रकार से देवताओं की स्तुति के आधार पर वह देवी सभी प्राणियों के अन्दर चितिरूपा है। उसी चितिरूप से निग्रहाचार्य में चितिसंवाद का आश्रय लेकर वह परमाक्षरसूत्र का उपदेश करती है।

सूत्रविस्तारभाष्यम्

अत्र नास्ति सम्प्रदायभेदः। एकैव शक्तिः परमेश्वरस्य भिन्ना चतुर्धा विनियोगकाल इति *भृङ्गिरिटिसंहितावचनेन* सूर्यशिवहरिशक्तिगणेशाख्यरूपाणां मध्येऽभेददर्शको निग्रहः। तेषु महति लीने परमाक्षरमेव शिष्यति तस्मात्सर्वे सन्दर्भिताः।

यहाँ सम्प्रदायभेद नहीं है। 'परमेश्वर की एक ही शक्ति है जो व्यवहारकाल में चार प्रकार की हो जाती है', ऐसे भृङ्गिरिटिसंहिता के वचनानुसार सूर्य, शिव, विष्णु, शक्ति और गणेश नाम वाले रूपों में निग्रह अभेद देखते हैं। इन सभी स्वरूपों के अपने महद्रूप में लीन हो जाने पर केवल परमाक्षर ही बचता है अतएव यहाँ सभी रूपों का सन्दर्भ प्रयोग किया गया है।

भ्रमः पञ्चविधो भाति तदेवेह समुच्यते। जीवेश्वरौ भिन्नरूपाविति प्राथमिको भ्रम इत्यन्नपूर्णोपनिषदि

तस्माज्जीवेश्वरमध्येऽभेददर्शनपूर्वक- महं वक्ष्ये। यस्मादसावादित्यो ब्रह्म इति श्रुतिर्महावाक्योपनिषदि तथा च गणेशो वै ब्रह्म इति भगवान् गणकाचार्यो गणेशदर्शनसूत्रेष्वनुगृह्णात्यहं ब्रह्मस्वरूपिणीति देवीवाक्यमस्ति देव्यथर्वशिरसि परञ्च नारायणः शिवो विष्णुः शङ्करः पुरुषोत्तमः। एतैस्तु नामभिर्ब्रह्म परं प्रोक्तं सनातनमिति *वराहपुराणे*॥ तस्मादभेददर्शको निग्रहः। ब्रह्मजिज्ञासुं मुद्गलं पृष्टमानमङ्गिरा प्राह यत्तदहं प्राग्भाष्यवैधानिकमुपदिशामि।

भ्रम पांच प्रकार का है, जिसमें जीव और ईश्वर भिन्न हैं, ये प्राथमिक भ्रम है, ऐसा अन्नपूर्णोपनिषत् में वर्णन है, अतएव जीव और ईश्वर के मध्य अभेद का दर्शन करते हुए मैं कहता हूँ कि 'ये आदित्य ब्रह्म हैं' ऐसी महावाक्योपनिषत् की श्रुति कहती है तथा 'गणेश ही ब्रह्म हैं' ऐसा भगवान् गणकाचार्य ने गणेशदर्शन सूत्रों में अनुग्रह किया है, 'मैं ब्रह्मस्वरूपिणी हूँ' ऐसा देवी-अथर्वशीर्ष में देवी ने कहा है तथा वराहपुराण का कथन है 'नारायण, शिव, विष्णु, शंकर, पुरुषोत्तम, इन नामों के द्वारा सनातन परब्रह्म को कहा गया है'; अतएव निग्रहाचार्य इनमें अभेददर्शन करते हैं। ब्रह्म को जानने की इच्छा रखने वाले एवं प्रश्न करने वाले मुद्गल को अङ्गिरा ने जो कहा, उसका मैं (निग्रहाचार्य) इस भाष्य के पूर्व में वैधानिक रूप से उपदेश करता हूँ।

श्रृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि वेदान्तैर्यत्प्रभाषितम्।
क्रमेण ब्रह्मलाभार्थं नानाब्रह्मनिरूपणम्॥

अन्नं ब्रह्मेति यत्प्रोक्तं तत्रोपाधिः समागतः।
अन्नरूपो महातेजा अन्नकोशमयं ततः॥
प्राणो ब्रह्मेति यत्प्रोक्तं प्राणकोशप्रकाशनम्।
मनो ब्रह्मेति जानीहि मनःकोशमयं तथा॥
विज्ञानं ब्रह्म चोक्तं विज्ञानकोशप्रधारकम्।
आनन्दो ब्रह्म समतानन्दकोशप्रभासकम्॥
चैतन्यं ब्रह्म यत्प्रोक्तं महाकारणधारकम्।
बिन्दुब्रह्म यदुक्तं तज्ज्ञानदेहमयं मुने॥
चिद्ब्रह्मेति समाख्यातं सोऽहं मात्रात्मकं मतम्।
बोधो ब्रह्मेति वेदेषु स्वत उत्थानवेदकम्॥
साङ्ख्यं ब्रह्मेति यत्प्रोक्तं विदेहाधारकं सुत।
कर्मज्ञाने तु वेदे च कथिते ते तदात्मके॥
समं ब्रह्मेति जानीहि कथितं नन्दनात्मकम्।
अव्यक्तं सहजं ब्रह्म ज्ञातव्यं नेतिरूपकम्॥
शक्तिब्रह्मेति वेदेषु ह्यसद्रूपप्रकाशकम्।
सूर्यो ब्रह्मेति यत्प्रोक्तमात्मरूपं प्रकीर्तितम्॥
विष्णुर्ब्रह्मेति यत्प्रोक्तमुभयात्मकधारकम्।
शिवो ब्रह्मेति शास्त्रेषु निर्मोहस्य प्रकाशकः॥
स्वानन्दो ब्रह्मवेदे च संयोगमयमुत्तमम्।
निर्वृत्तिर्ब्रह्मशास्त्रेषु ह्ययोगाधारकं परम्॥
एवं नानाप्रकारैश्च वेदादौ च प्रकथ्यते।
मुनिभिर्ब्रह्मवादज्ञैः सर्वं तथ्यं प्रमाणतः॥

बृंहत्यथो बृंहयति यद्ब्रह्म श्रुतिवाक्यतः ।
तदेव ब्रह्मभूतत्वं ज्ञातव्यं मुनिभिः सदा ॥
*इत्यादिवचोभिरङ्गिरा मुद्गलमुपदिष्टं कृत्वाग्रे निर्णयति तत्रैव*
इत्यादयो गणास्तस्यानन्ता ब्रह्मप्रवाचकाः ।
तेषां स्वामी गणेशानः स एव ब्रह्मणस्पतिः ॥
(मुद्गलपुराणे प्रथमखण्डे)

अंगिरा ने कहा - 'हे पुत्र ! सुनो, वेदान्त में जो कहा गया है, उस अनुसार ब्रह्मलाभ के लिये क्रमानुसार नानाविध ब्रह्म का निरूपण करता हूँ। जहाँ पर अन्न ही ब्रह्म है, ऐसा कहा गया है, वहाँ पर उपाधियुक्त अत्यंत प्रकाशित अन्नरूप अन्नमयकोष का निरूपण समझना चाहिए। जहाँ पर प्राण ही ब्रह्म है, ऐसा कहा गया है, वहाँ प्राणमयकोष का प्रकाशन किया गया है और मनोमयकोष के प्रकाशन में मन ही ब्रह्म है, ऐसा समझना चाहिए। विज्ञानमयकोष को धारण करने की स्थिति में विज्ञान को ब्रह्म कहा गया है और (तुलनापत्त्यादि विकारों से रहित) समता को प्रकाशित करने वाला आनन्दमयकोष आनन्द को ही ब्रह्मसंज्ञक बताता है। जहाँ पर चैतन्यतत्त्व को ब्रह्म कहा गया है, वहाँ वह महाकारण (देहविशेष) को धारण करता है और ज्ञानमय देह को, हे मुने ! बिन्दुब्रह्म धारण करता है। चिद्ब्रह्म के नाम से जो विख्यात है, उसमें ब्रह्म और जीव की एकात्मकता का भाव ही कहा गया है। वेदों में जीव के अन्दर स्वतः ही ऊर्ध्वगति का बोधक 'बोध' की ब्रह्म संज्ञा है। हे पुत्र ! देह में रहते हुए भी देहजन्य आसक्ति का निवारण करने का आधारभूत 'सांख्य' ब्रह्म कहा गया है। कर्ममार्ग और ज्ञानमार्ग का निरूपण वेदों में किया गया है, उनके आधार पर

समत्व को ही नन्दन (प्रसन्नता) का रूपक ब्रह्म जानो। प्रपञ्चरहित सहजावस्था में अव्यक्त ही ब्रह्म है और उनके बोध होने पर 'ऐसा नहीं है', अथवा 'इतना ही नहीं है' आदि संज्ञाओं से बोध्य तत्त्व ही ब्रह्म है। वेदों में असद्रूप का प्रकाशन करने वाली शक्ति ही ब्रह्म कही गयी है। (मिथ्या संसार और इसके असद्विकारों को प्रकाशित करने वाली प्रकृति ही शक्ति है और उसकी भी ब्रह्म संज्ञा है)। आत्मरूप का प्रकाशन करने वाला सूर्य भी ब्रह्म कहा गया है। उभयात्मक (जड-चेतनात्मक अथवा शिवशक्त्यात्मक) विष्णु को भी ब्रह्म कहा गया है। (रुद्रहृदयोपनिषत् के अनुसार शिव और शक्ति का सम्मिलित अथवा उभयात्मक रूप ही विष्णु है)।

शास्त्रों में निर्मोह (अनासक्ति या वैराग्य) को प्रकाशित करने वाला शिव ही ब्रह्म कहा गया है। जीव एवं ब्रह्म, ब्रह्म एवं माया तथा माया एवं जीव के मध्य आनन्दसंज्ञक संयोग-अयोग का आधार और निर्वृत्ति का कारण परसंज्ञक परब्रह्म कहा गया है। इसी प्रकार ब्रह्मवाद को जानने वाले मुनियों के द्वारा नाना प्रकार से वेदादि में यह सब कुछ तथ्य एवं प्रमाणों के साथ कहा गया है। जो वेदादि के वाक्यों के अनुसार विस्तृत हो या विस्तृत करे, वह तत्त्व ही ब्रह्म है ऐसा मुनियों के द्वारा सदैव जानना चाहिए', इस प्रकार के वचनों से अंगिरा ने मुद्गल को उपदेश देकर उसी प्रसंग में आगे निर्णय किया है - ' यहाँ तक जितने प्रभेद बताये गए हैं, उनकी गण संज्ञा है। ये सभी ब्रह्म के प्रवाचक अनन्त हैं। उनका स्वामी गणेशान/ गणेश है और वही ब्रह्मणस्पति है।' यह मुद्गलपुराण के प्रथमखण्ड में वर्णित है।

## साब्रवीत् - तदेकं सनातनम् ||१९||

वह (देवी) बोली - वह ब्रह्म एक प्रकार का है - सनातन।

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथं सनातनं भवति ?

सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥

(श्रीमद्भगवद्गीतायामर्जुनः)

अजं पुराणमजरं सनातनं यमिन्द्रियातिगमगोचरं द्विजाः।

अवेक्ष्य चेमां परमेष्ठिसाम्यतां प्रयान्त्यनावृत्तिगतिं मनीषिणः॥

(ब्रह्मपुराणे)

किस प्रकार से सनातन होता है ? श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण को अर्जुन कहते हैं - 'आप सनातन पुरुष हैं, ऐसा मैं समझता हूँ।' ब्रह्मपुराण का कहना है - 'जिसका जन्म नहीं होता, जो अत्यन्त प्राचीन किन्तु वृद्ध नहीं है, नित्य और विस्तृत है, जिस इन्द्रियातीत का मनीषी विप्रजन दर्शन करके परमोत्तम शान्ति और संतुलन की अवस्था को प्राप्त करके फिर इस संसार में नहीं लौटते, (वही ब्रह्म है)।'

तं सदानन्दचिन्मात्रं पराणां परमं पदम्।

सर्वं सनातनं श्रेष्ठं प्रणतोऽस्मि जनार्दनम्॥

(नारदपुराणे)

नारदपुराण की उक्ति है - 'उन सदैव आनन्दित, चिन्मात्र, मोक्षमार्गियों के परम पद, सभी प्रकार से नित्य एवं व्यापक, श्रेष्ठ जनार्दन को मैं प्रणाम करता हूँ।'

अदृश्यमव्यक्तमचिन्त्यमव्ययं महर्षयो ब्रह्ममयं सनातनम्।
वदन्ति यं वै पुरुषं सनातनं तं देवगुह्यं शरणं प्रपद्ये॥
(वामनपुराणे)

'जो इन्द्रियों से दिखाई नहीं पड़ता, व्यक्त नहीं होता, जिसका चिन्तन या नाश सम्भव नहीं, जिसे महर्षिगण सनातन ब्रह्मरूप कहते हैं, उस नित्य व्यापक गुप्त देवता (अथवा देवताओं के लिए भी गुप्त) ब्रह्म की मैं शरण ग्रहण करता हूँ', ऐसी वामनपुराण की उक्ति है।

शुभं सनातनं ज्योतिः परंब्रह्मेति तद्विदुः।
न तत्र मूढा गच्छन्ति पुरुषा विषयात्मकाः॥
(पद्मपुराणस्य भूमिखण्डे)

पद्मपुराण के भूमिखण्ड में कहते हैं - 'जो शुभता से युक्त है, सनातन है, स्वयं प्रकाशमान है, उसे परब्रह्म के नाम से जानते हैं। वहां तक विषय-वासनाओं में फंसे मूढ़ व्यक्ति नहीं पहुँच पाते।'

सेवन्ते सन्ततं सन्तो ब्रह्मेशशेषसंज्ञकाः।
सेवन्ते निर्गुणं ब्रह्म भगवन्तं सनातनम्॥
(नारदपञ्चरात्रे प्रथमैकरात्रे)

नारदपञ्चरात्र के प्रथमैकरात्र (के बारहवें अध्याय) में कहते हैं - 'ब्रह्मा, शिव और शेषसंज्ञक संत जन उन निर्गुण सनातन भगवान् की निरन्तर सेवा करते हैं।'

त्रिनेत्रं पञ्चवक्त्रञ्च कोटिचन्द्रसमप्रभम्।
जपन्तं परमात्मानं ब्रह्म ज्योतिः सनातनम्॥
(नारदपञ्चरात्रे प्रथमैकरात्रे)

नारदपञ्चरात्र के प्रथमैकरात्र (के आठवें अध्याय) में कहते हैं - 'उस ब्रह्म के तीन नेत्र हैं, पांच मुख हैं, करोड़ों चंद्रमाओं के समान उसकी प्रभा है, उस स्वयं प्रकाशित सनातन परमात्मा ब्रह्म का जप करते हुए साधकजन (उसका ध्यान करते हैं)।'

सर्वस्वरूपं सर्वेशं सर्वबीजं सनातनम्।
(नारदपञ्चरात्रे प्रथमैकरात्रे)

नारदपञ्चरात्र के प्रथमैकरात्र (के पांचवें अध्याय) में कहते हैं - 'वह ब्रह्म सभी प्राणियों में आत्मरूप से व्याप्त है, सबों का स्वामी और आदिकारण है, नित्य एवं व्यापक सनातन है।'

सनातनं परं ब्रह्म ज्ञानशब्देन कथ्यते।
ज्ञानिनां परमात्मा वै हृदि भाति निरन्तरम्॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के पूर्वार्द्ध के तैंतीसवें अध्याय) का वचन है - 'सनातन परब्रह्म को ज्ञानशब्द से कहा जाता है, ज्ञानियों के हृदय में परमात्मा निरन्तर प्रकाशित रहते हैं।'

अत्र श्रुतिः

अथाह यत्परमं ब्रह्म सनातनं ये श्रोत्रिया अकामहता अधीयुः ॥

(शाट्यायनीयोपनिषत्)

शाट्यायनीयोपनिषत् की श्रुति कहती है - 'अब हम उस सनातन परम ब्रह्म को कहते हैं जिसे वे श्रुति-विशेषज्ञ जानते हैं जो कामनाओं के द्वारा आहत नहीं हुए हैं।'

नमामि विश्वेश्वरविश्वरूपं सनातनं ब्रह्म निजात्मरूपम् ॥

(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के माहेश्वर/केदारखण्ड) की उक्ति है - 'मैं विश्व के स्वामी, विश्व के रूप में गोचर, आत्मरूप सनातन ब्रह्म को नमस्कार करता हूँ।'

सनातनं ब्रह्म निरन्तरं यत्पदे पदे सोऽहमिति प्रपश्येत्।
यो भावतस्तिष्ठति निष्प्रकम्पः स ब्रह्मभूतोऽमृततामुपैति ॥

(देवीकालोत्तरागमे)

'जो व्यक्ति निरन्तर, कदम कदम पर सनातन ब्रह्म को, मैं वही हूँ, इस भाव से देखता है और उसी भाव में अविचल स्थिति से रहता है, वही ब्रह्मभूत होकर अमृतत्व को प्राप्त करता है,' ऐसा देवीकालोत्तरागम का वचन है।

अजं पुराणमजरं सनातनं यदिन्द्रियैरुपलभेत निश्चलैः।
अणोरणीयो महतो महत्तरं तदात्मना पश्यति युक्तमात्मवान् ॥

(महाभारते शान्तिपर्वणि)

'जो ब्रह्म अजन्मा है, प्राचीन है किन्तु वृद्ध नहीं है, सनातन है, जो निश्चल इन्द्रियों के द्वारा अनुभूत हो जाता है, जो अणु से भी सूक्ष्म एवं महान् से भी अधिक महान् है, उसे ही आत्मा के द्वारा आत्मवान् व्यक्ति देखता है', ऐसा महाभारत के शान्तिपर्व में वर्णित है।

अदृश्यमच्छेद्यमनादिमध्यं महर्षयो ब्रह्मनिधिं सुरेशम्।
वदन्ति यं वै पुरुषं सनातनं तं वासुदेवं शरणं प्रपद्ये॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराणे)

विष्णुधर्मोत्तरपुराण (के प्रथमखण्ड) में कहते हैं - 'जिसे देखा नहीं जा सकता, जिसे छिन्न-भिन्न नहीं किया जा सकता, जिसका आदि या मध्य ज्ञात नहीं, जिसे महर्षिजन ब्रह्मसम्पदा और देवताओं का स्वामी बताते हैं, उस सनातन पुरुष वासुदेव की मैं शरण ग्रहण करता हूँ।'

पुरुषं सनातनं विष्णुं यं तं वेदविदो विदुः।
सर्गप्रलयकर्तारमव्यक्तं ब्रह्म शाश्वतम्॥
(महाभारते शान्तिपर्वणि)

'जो सनातन पुरुष है, विश्व का पालन करने वाला विष्णु है, संसार की सृष्टि और प्रलय करने वाला, अव्यक्त शाश्वत ब्रह्म है, उसे वेद के विद्वान् जानते हैं', ऐसा महाभारत के शान्तिपर्व की उक्ति है।

ब्रह्मणः सदनादूर्ध्वं तद्विष्णोः परमं पदम्।
शुद्धं सनातनं ज्योतिः परं ब्रह्मेति यद्विदुः॥
(महाभारते)

महाभारत (के आरण्यकपर्व) का वचन है - 'ब्रह्मा के स्थान (ब्रह्मलोक या सत्यलोक) से ऊपर विष्णु का परमपद है, जो शुद्ध है, सनातन है, ज्योतिः-स्वरूप है और जिसे परब्रह्म के नाम से जानते हैं।'

अत्र श्रुतिः

ततः शिंशुमारचक्रं विभिद्य शिंशुमारप्रजापतिमभ्यर्च्य चक्रमध्यगतं सर्वाधारं सनातनं महाविष्णुमाराध्य तेन पूजितस्तत उपर्युपरि गत्वा परमानन्दं प्राप्य प्रकाशते।

(त्रिपाद्विभूतिमहानारायणोपनिषत्)

यहाँ श्रुति है, त्रिपाद्विभूतिमहानारायणोपनिषत् में वर्णन है - 'उसके बाद (साधक) शिशुमार चक्र का भेदन करके, शिशुमार-प्रजापति की आराधना करके शिशुमारचक्र के मध्य में सबों के आधार सनातन महाविष्णु की आराधना करके और उनके द्वारा भी सम्मानित होकर फिर ऊपर जाकर परमानन्द को प्राप्त करके प्रकाशित होता है।'

एवमेव

परात्परं यन्महतो महान्तं स्वरूपतेजोमयशाश्वतं शिवम्।
कविं पुराणं पुरुषं सनातनं सर्वेश्वरं सर्वदेवैरुपास्यम् ॥

(महोपनिषत्)

महोपनिषत् का कथन है - 'वह ब्रह्म पर से भी परे है, महान् से भी महान् है, अपने रूप के तेज से युक्त, शाश्वत एवं कल्याणकारी है,

ज्ञानसम्पन्न, प्राचीन सनातन पुरुष है, सबों का ईश्वर है और सभी देवताओं के द्वारा उपासित है।'

परञ्च

तुभ्यमिदं गुह्यं गोप्यं ब्रह्म सनातनं चिरन्तनं प्रवक्ष्यामि।
यद्विज्ञानात्सर्वसंसारोपरमो भवति॥

(काठकोपनिषत्)

पद्मासनम् बद्ध्वा। प्राणानायम्य। सनातनं ब्रह्म ध्यायेत्॥

(क्रियाकैरवचन्द्रिकायाम्)

इसके अतिरिक्त काठकोपनिषत् में कहते हैं - 'तुम्हारे लिये गुप्त एवं गोपनीय सनातन प्राचीन ब्रह्म का कथन करूँगा जिसके ज्ञान के बाद समस्त सांसारिक विकारों से जीव विरक्त हो जाता है।'
क्रियाकैरवचन्द्रिका निर्दिष्ट करती है कि पद्मासन लगाकर, प्राणायाम करके सनातन ब्रह्म का ध्यान करे।

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||२०||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु द्विधा निर्गुणञ्च सगुणञ्च ||२१||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो दो प्रकार का है - निर्गुण एवं सगुण।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? प्रकृतियुक्तः सगुणोऽतीतश्च निर्गुणः। क्रियाकाले सगुणोऽन्यथा निर्गुणः। श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - वस्तुतो गुणाभावान्निर्गुणः, 'केवलो निर्गुणश्च', इति श्रुतेः।

किस प्रकार से ऐसा है ? प्रकृति से युक्त होकर सगुण होता है, उससे अतीत होने पर निर्गुण होता है। क्रियाकाल में सगुण है, इसके अनन्तर निर्गुण है। श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - तत्त्वतः गुणों से रहित होने के कारण निर्गुण है। श्रुतिवाक्य है 'यह केवल (सबों के नष्ट होने पर भी शेष) ब्रह्म निर्गुण है।'

अव्यक्तं व्यक्तधर्माणं सगुणं निर्गुणं तथा।
निर्गुणं प्रथमं दृष्ट्वा तादृग्भवति मैथिल॥
(ब्रह्मपुराणे)

'हे मैथिल ! जो व्यक्त नहीं होने पर भी व्यक्त हो जाता है, गुणों से युक्त और गुणों से रहित भी है, उसमें निर्गुण का सर्वप्रथम साक्षात्कार करके (याजक) उसी के समान हो जाता है', ऐसी ब्रह्मपुराण की उक्ति है।

शब्दातीतं गुणातीतं भावाभावविवर्जितम्।
निर्लेपं निर्गुणं सूक्ष्मं सर्वज्ञं सर्वभावनम्॥
(ब्रह्मपुराणे)

ब्रह्मपुराण में कहते हैं - 'उसका वर्णन शब्द से नहीं किया जा सकता, जो शब्दातीत है, जो गुणों से भी अतीत है, भाव एवं अभाव से रहित है, किसी भी बाह्य कारक से लिप्त नहीं होता है, सत्वादि त्रिगुणों से लिप्त नहीं होता, सूक्ष्म है, सभी घटना या प्रसंगों का संज्ञान रखता है और सबों में व्याप्त है।'

अव्यक्तं कारणं यत्तदक्षरं परमं पदम्।
निर्गुणं शुद्धविज्ञानं तद्वै पश्यन्ति सूरयः॥
(कूर्मपुराणे)

'जो इन्द्रियों के सापेक्ष व्यक्त नहीं है, अव्यक्त है, भूतसर्गादि का कारण है, उस क्षरसंज्ञक विकारों से रहित, गुणातीत, शुद्ध विज्ञानमय परम पद का दर्शन बुद्धिमान् जन करते हैं', ऐसा कूर्मपुराण के उत्तरभागस्थ दशम अध्याय में वर्णित है।

वर्णितमस्ति

अभिन्नं भिन्नसंस्थानं शाश्वतं ध्रुवमव्ययम्।
निर्गुणं परमं व्योम तज्ज्ञानं सूरयो विदुः॥
(कूर्मपुराणे)

'जो (व्यापक होने से) अभिन्न है किन्तु अन्य सभी भिन्न विकारों का आधार है, शाश्वत है, अचल और अविनाशी है, निर्गुण है, क्षर आदि से परे हैं, आकाशवत् निर्लेप है, उसके ज्ञान को विद्वान् जन जानते हैं', ऐसा कूर्मपुराण के उत्तरभाग में वर्णित है।

अत्र श्रुतिः

भूतसम्मोहने काले भिन्ने तमसि वैखरे।
अन्तः पश्यन्ति सत्त्वस्था निर्गुणं गुणगह्वरे॥
(मान्त्रिकोपनिषत्)

मान्त्रिकोपनिषत् की उक्ति है कि प्राणियों को मोहित करने के समय, उनकी विविधता के मध्य, तमस् और वैखरसंज्ञक महदावरणों के साथ भी त्रिगुणों से युक्त इस गहन प्रपञ्च में उस ब्रह्मतत्त्व को सत्वभाव में स्थित जन स्वात्मरूप में अन्तःस्थित देखते हैं।

पुरुषं निर्गुणं साङ्ख्यमथर्वशिरसो विदुः॥
(मान्त्रिकोपनिषत्)

मान्त्रिकोपनिषत् की उक्ति है कि सांख्य (वैशम्पायन के मत से ब्रह्मा की आयु अथवा दर्शनविशेष) की सीमापर्यन्त उस निर्गुण पुरुष को अथर्वशिरस् संज्ञक  सम्बन्धी ज्ञान के वेत्ता जानते हैं।

अत्र परार्धं साङ्ख्यमुच्यते वैशम्पायनमतेन।
अद्वयं द्वैतमापन्नं निर्गुणं सगुणात्मकम्।
(ब्रह्माण्डपुराणे)

'वह एक ही है, दो नहीं, फिर भी उसमें द्वैतभाव का आभास होता है। वह निर्गुण है, सगुण नहीं, फिर भी वह सगुण के रूप में लक्षित होता है', ऐसा ब्रह्माण्डपुराण के मध्यभाग में कथन है।

निर्गुणं परमात्मानं विद्धि लिङ्गस्वरूपिणम्।
परा शक्तिस्तथा ज्ञेया निर्गुणा शाश्वती सती॥
(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के माहेश्वर/केदारखण्ड) में कहते हैं - 'निर्गुण परमात्मा को लिंगस्वरूपी जानो तथा उसकी पराशक्ति भी उसी प्रकार से सती, निर्गुणा और शाश्वती (कभी नष्ट नहीं होने वाली) है।'

परं प्रधानं पुरुषं निर्गुणं प्रकृतेः परम्।
तत्रैव लीना प्रकृतिः सर्वबीजस्वरूपिणी॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

'प्रकृति से परे जो परसंज्ञक प्रधान निर्गुण पुरुष (परब्रह्म) है, उसी में सभी रचनाओं की आधारभूता प्रकृति लीन होती है', ऐसा ब्रह्मवैवर्तपुराण (के ब्रह्मखण्ड) का वचन है।

सगुणं निर्गुणं शान्तं मायातीतं सुमायिनम्।
अरूपं बहुरूपं तं प्रणतोऽस्मि जनार्दनम्॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के पूर्वार्द्ध में पञ्चम अध्याय) का वचन है - 'जो जनार्दन सगुण भी हैं और निर्गुण भी हैं, शान्त (उद्वेगरहित) हैं, माया से परे हैं और स्वयं ही नाना प्रकार की मायाओं में दक्ष हैं, किसी भी रूप में आबद्ध न होते हुए भी अनेकों प्रकार के रूपों को धारण करते हैं, उनके समक्ष मैं प्रणत हूँ।'

यदिदं दृश्यते किञ्चिज्जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥
तत्सर्वं ब्रह्म निर्धर्मं निर्गुणं निर्मलात्मकम् ।
निर्विकारमनाद्यन्तं नित्यं शान्तं समात्मकम् ॥
(योगवासिष्ठमहारामायणे)

योगवाशिष्ठ महारामायण (के निर्वाणप्रकरण) में कहते हैं - 'जो कुछ भी इस संसार में चल या अचल दिखाई दे रहा है, वह सब कुछ ब्रह्म है। वह ब्रह्म गुण, धारणीय लक्षण एवं मलादि से रहित है। वह विकार एवं आदि-अन्त से भी रहित है, सदैव स्थायी, शान्त और साम्यभाव में स्थित रहने वाला है।'

द्विधा भवति तद्ध्यानं सगुणं निर्गुणं तथा ।
सगुणं वर्णभेदेन निर्गुणं केवलं विदुः ॥
(गोरक्षशतके)

गोरक्षशतक का वचन है, 'उस ब्रह्म का ध्यान दो प्रकार से होता है, सगुण एवं निर्गुण। भिन्न प्रकार के वर्णों के आधार पर सगुण एवं उससे रहित निर्गुण को जानते हैं।'

सगुणं निर्गुणञ्चैव भक्तानुग्रहविग्रहम् ।
सत्यं सत्यस्वरूपञ्च ब्रह्म ज्योतिः सनातनम् ॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

ब्रह्मवैवर्तपुराण (के गणपतिखण्ड) की उक्ति है - ' वह ब्रह्म सगुण भी है और निर्गुण भी है, अपने भक्तों के ऊपर अनुग्रह करने वाला स्वरूप

धारण करता है, सत्य है, सत्यस्वरूप है, शान्त, प्रकाशित, अविनाशी और विस्तृत है।'

निरावासं निराकारं सुप्रकाशं महोदयम्।
निर्गुणं गुणसंबद्धं नमामि प्रणवं परम्॥
(पद्मपुराणे)

पद्मपुराण (के भूमिखण्ड) में कहते हैं - 'आवास से रहित (संकुचित या संकीर्णता अथवा पराश्रित आदि कुभावों से रहित), निश्चित आकार से रहित, भलीभांति प्रकाशित, महान् प्राकट्य वाले, गुण से रहित किन्तु फिर भी गुणों से सम्बन्धित उस परम प्रणव को मैं प्रणाम करता हूँ।'

सर्वज्ञं निर्गुणं शुद्धमानन्दमजरं परम्।
बोधरूपं ध्रुवं शान्तं पूर्णमद्वैतमक्षयम्॥
(गरुडपुराणाचारकाण्डे)

गरुडपुराण के आचारकाण्ड की उक्ति है - 'ब्रह्म सर्वज्ञ है, निर्गुण है, शुद्ध है, आनन्दरूप अजर और जड से परे हैं। उसके रूप का अधिगमन बोध से होता है, अचल है, शान्त, पूर्ण, अद्वितीय है और उसका क्षय नहीं होता है'।

सगुणं निर्गुणञ्चापि भक्ताधीनं कृपाकरम्।
प्रकृतेः पुरुषस्यापि परं सच्चित्सुखात्मकम्॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण (की रुद्रसंहिता के पार्वतीखण्ड) का वचन है - 'वे सगुण भी हैं, निर्गुण भी हैं, भक्तों के (भाव के) अधीन हैं, कृपा करने वाले हैं, जड प्रकृति और चेतन पुरुष (आत्मा) से भी परे हैं। सत्, चित् और सुखस्वरूप है।'

अथ कथं निर्गुणोऽपि सगुणतामेति ? अत्राह नारदः

किं तत् षाड्गुण्यमित्युक्तं देवदेव जगत्पते।
कथं च गुणहीनं तत् षाड्गुण्यं परिगीयते॥

अहिर्बुध्न्य उवाच

अप्राकृतगुणस्पर्शं निर्गुणं परिगीयते।
शृणु नारद षाड्गुण्यं कथ्यमानं मयानघ॥
अजडं स्वात्मसंबोधि नित्यं सर्वावगाहनम्।
ज्ञानं नाम गुणं प्राहुः प्रथमं गुणचिन्तकाः॥
स्वरूपं ब्रह्मणस्तच्च गुणश्च परिगीयते।
जगत्प्रकृतिभावो यः सा शक्तिः परिकीर्तिता॥
कर्तृत्वं नाम यत्तस्य स्वातन्त्र्यपरिबृंहितम्।
ऐश्वर्यं नाम तत्प्रोक्तं गुणतत्त्वार्थचिन्तकैः॥
श्रमहानिस्तु या तस्य सततं कुर्वतो जगत्।
बलं नाम गुणस्तस्य कथितो गुणचिन्तकैः॥
तस्योपादानभावेऽपि विकारविरहो हि यः।
वीर्यं नाम गुणः सोऽयमच्युतत्वापराह्वयम्॥
सहकार्यनपेक्षा या तत्तेजः समुदाहृतम्।
एते शक्त्यादयः पञ्चगुणा ज्ञानस्य कीर्तिताः॥

ज्ञानमेव परं रूपं ब्रह्मणः परमात्मनः।
षाड्गुण्यं तत्परं ब्रह्म स्वशक्तिपरिबृंहितम्।
बहु स्यामिति सङ्कल्पं भजते तत्सुदर्शनम्॥
(अहिर्बुध्न्यसंहितायाम्)

अब किस प्रकार से निर्गुण सगुणता को प्राप्त करता है ? यहाँ नारद ने कहा - 'हे देवताओं के भी देव ! संसार के स्वामिन् ! ब्रह्म में षाड्गुण्य किसे कहते हैं ? उस (गुणहीन) निर्गुण में षाड्गुण्य (छः गुण) कैसे बताया जाता है ?'

भगवान् अहिर्बुध्न्य ने कहा - 'ऐसे गुण, जिसका निर्माण प्रकृति ने नहीं किया है, उनके द्वारा स्पर्श होने पर भी ब्रह्म निर्गुण ही कहलाता है। हे निष्पाप नारद ! मेरे द्वारा कहे जा रहे षाड्गुण्य (अप्राकृतिक प्रपञ्च) को सुनो। जो जड़ता से रहित है, जिसे बाह्य कारक से प्राप्त नहीं किया जा सकता, अपितु जो अपने तत्त्वरूप से ही बोधित होता है, सदैव विद्यमान् रहने वाला है, उसे गुण का चिन्तन करने वाले जन ज्ञान नामक प्रथम गुण कहते हैं।

ज्ञान ब्रह्म का स्वरूप भी है और गुण भी है। संसारसम्बन्धी प्रकृति का जो भाव है, उसे ब्रह्म का दूसरा गुण 'शक्ति' के नाम से कहा जाता है। ब्रह्म की अपनी स्वाधिष्ठित और विस्तृत (असीमित) स्वतन्त्रता वाला जो कर्तृत्वलक्षण है, वही गुणतत्त्व का चिन्तन करने वालों के द्वारा 'ऐश्वर्य' नाम से कहा जाता है। संसार की निरन्तर रचना करने के समय उसका जो श्रमहानि का भाव होता है, वही गुणचिन्तकों के द्वारा 'बल'

नामक गुण कहा गया है। ब्रह्म अपने स्वरूप या ब्राह्मी स्थिति से च्युत या स्खलित नहीं होता, इसीलिए संसार के निर्माण का उपादान होने पर भी वह मूलरूप में विकारों से रहित ही होता है, वही उसका 'वीर्य' नामक गुण है। संसार की सृष्टि, स्थिति एवं संहारादि क्रियाओं में उसे किसी अन्य की आवश्यकता नहीं पडती, अथवा वह किसी के सहयोग की अपेक्षा नहीं रखता है, वही ब्रह्म का 'तेज' नामक गुण है। ये सभी शक्ति आदि जो पांच गुण कहे गए हैं, ये सभी ब्रह्म के प्रथम गुण ज्ञान के ही अंश हैं क्योंकि ज्ञान ही ब्रह्म परमात्मा का परमरूप है। अपनी शक्ति से विस्तृत ब्रह्म इन्हीं छः गुणों के आधार पर 'बहु स्याम्' (बहुत हो जाऊं) का संकल्प करता है, उसी सुन्दर स्वरूप वाले ब्रह्म का भजन किया जाता है।' ऐसा वर्णन अहिर्बुध्न्य संहिता के दूसरे अध्याय में है।

तेजोबलैश्वर्यमहावबोधं स्ववीर्यशक्त्यादिगुणैकराशिः।
परः पराणां सकला न यत्र क्लेशादयः सन्ति परावरेशे॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के पूर्वार्ध के अध्याय छियालीस) में कहते हैं - 'तेज, बल, ऐश्वर्य, महान् बोध, वीर्य, शक्ति आदि गुणों की राशि वह परतत्त्वों का भी परतत्त्व है, उस परमेश्वर में क्लेश आदि प्रवेश नहीं कर पाते।'

सगुणं वणर्भेदेन निर्गुणं केवलं मतम्।
समन्त्रं सगुणं विद्धि निर्गुणं मन्त्रवर्जितम्॥
(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के काशीखण्ड) का कथन है - 'वर्णभेद से सगुण और अद्वितीय भाव से निर्गुण कहा गया है। जिसका मनन किया जा सके उसे सगुण जानो एवं मनन से अतीत को निर्गुण समझना चाहिए।'

निर्गुणं सगुणञ्चेति द्विधा मद्रूपमुच्यते।
निर्गुणं मायया हीनं सगुणं मायया युतम् ॥
(श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणे)

श्रीमद्देवीभागवत महापुराण (के बारहवें स्कन्ध) का वचन है - 'मेरा स्वरूप दो प्रकार का बताया गया है, सगुण एवं निर्गुण। माया से रहित निर्गुण होता है और माया से युक्त स्वरूप सगुण होता है।'

श्रुतयो वर्णयन्ते यत्तद्रूपन्तु ममैव हि॥
सगुणं निर्गुणञ्चेति मद्रूपं द्विविधं मतम्।
मायाशबलितं चैकं द्वितीयन्तदनाश्रितम्॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण की उमासंहिता कहती है - 'श्रुतियाँ (वेद) जिसका वर्णन करते हैं, वह मेरा ही रूप है। मेरा रूप दो प्रकार का है, एक सगुण, दूसरा निर्गुण। एक तो माया के द्वारा आक्रान्त है एवं दूसरा उसके ऊपर आश्रित नहीं है।'

निषेव्य निर्गुणं देवं ते भवन्ति च निर्गुणाः।
(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

ब्रह्मवैवर्तपुराण (के प्रकृतिखण्ड) की उक्ति है - 'उस निर्गुण देव की सेवा करके याजक भी निर्गुण हो जाते हैं।'

शुभं निरञ्जनं शुद्धं निर्गुणं द्वैतवर्जितम्।
आत्मोपलब्धिविषयं देव्यास्तत्परमं पदम्॥
(कूर्मपुराणे)

कूर्मपुराण (के पूर्वभाग में द्वादश अध्याय) का कथन है - 'शुभता से युक्त, निरंजन, शुद्ध, निर्गुण, द्वैतभाव से रहित, आत्मा के द्वारा ही जिसकी उपलब्धि सम्भव है, ऐसा वह देवी का परम पद है।'

सेवन्ते सगुणं सत्त्वं विष्णुं विषयिणं तदा।
सत्त्वज्ञानाच्च पश्यन्ति ज्ञानं वै निर्मलं नराः॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

'नर-समुदाय पालन आदि विषयों वाले सत्वरूपी सगुण विष्णु का सेवन करते हैं, और सत्वज्ञान के पश्चात् वे ज्ञानरूपी निर्मल ब्रह्म को देखते हैं,' इस प्रकार से ब्रह्मवैवर्तपुराण (के प्रकृतिखण्ड) की उक्ति है।

सगुणं निर्गुणं ताभ्यामन्यन्निष्प्रतियोगिकम्।
ब्रह्मैवं त्रिविधं लिङ्गैर्वेदान्तेषु हि विश्रुतम्॥
तत्राद्यं हेयगुणकं सोपाधित्वान्मुमुक्षुभिः।
तत्त्वमस्यादिवाच्यत्वाज्ज्ञेयं हेयतयाग्रतः॥
जीवेश्वरविभागेन सगुणं द्विविधं भवेत्।

जीवश्च त्रिविधस्तद्वदीशश्चास्तामिदं तथा ॥
उपादेयं द्वितीयं स्यान्निर्गुणं मोक्षकाङ्क्षिभिः ।
तत्त्वमस्यादिलक्ष्यत्वाज्ज्ञेयं चात्मतया ततः ॥
हेयोपादेयशून्यं तत्तृतीयं प्रकृतं यतः ।
मुक्तैः प्राप्यमतश्शब्दमपि ज्ञेयं मुमुक्षुभिः ॥
(ऋभुगीतायाम्)

'सगुण एवं निर्गुण, तथा इन दोनों से भिन्न - इन दोनों का ही आधार और संयोजक ब्रह्म वेदान्त ग्रन्थों में तीन प्रकार का कहा जाता है। उसमें से प्रथम हेय (निम्न) गुण से युक्त होकर हेयोपाधि के साथ मोक्ष की इच्छा रखने वालों के द्वारा हेय से आगे (उपादेय) के साथ 'वह (उपादेय) तुम (हेय) ही हो', इस वाच्यार्थ के द्वारा जाना जाता है। जीव और ईश्वर के विभाग से सगुण भी दो प्रकार का हो जाता है और जीव भी उसी प्रकार से तीन (बद्ध, नित्य, मुक्त) प्रकार का हो जाता है, इस प्रकार से ईश्वर और जीव, चेतन के यह दो प्रधान विभाजन होते हैं।

मोक्ष की कामना वालों के द्वारा दूसरे, उपादेय चेतन (ब्रह्म), जो निर्गुण है उसकी 'वह (उपादेय) तुम (हेय) ही हो', इस लक्ष्यार्थ के द्वारा आत्मवत् सादृश्यता से जानना चाहिये। हेय और उपादेय से रहित जो तृतीय स्थिति है, जो इन दोनों स्थितियों के पहले से विद्यमान है वही मुक्त जनों के द्वारा प्राप्य है इसीलिए मोक्ष की इच्छा रखने वालों के लिए शब्दब्रह्म का बोध होना भी आवश्यक है', ऐसा ऋभुगीता का वचन है।

सगुणं ब्रह्म तामाहुरनुत्तरपदाभिधाम्।
प्रपञ्चद्वयनिर्माणकारिणीं तां पराम्बिकाम्॥
(ब्रह्माण्डपुराणे)

'अनुत्तरपद (जिससे श्रेष्ठ कोई नहीं) वाली उस पराम्बिका को, जो दो प्रपञ्च (भूतगम्य/ सांसारिक एवं भूतातीत/अप्राकृतिक सृष्टि) का निर्माण करती है, उन्हें सगुण ब्रह्म कहते हैं', ऐसा ब्रह्माण्डपुराण के उत्तरभाग के वर्णित है।

एतदेवाक्षरं ब्रह्म सगुणं निर्गुणञ्च।
एतदेवाक्षरं ज्ञात्वा ब्रह्मत्वेनोपास्य ब्रह्मलोके महीयते।
(शिवगीतायाम्)

शिवगीता का कथन है - 'इस प्रकार से यह अविनाशी ब्रह्म सगुण और निर्गुण है। इसी अक्षरब्रह्म को जानकर ब्रह्मभाव से आराधना करने वाला ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठित होता है। (यहाँ ब्रह्मलोक का अर्थ ब्रह्मा का विनाशधर्मा लोक नहीं, अपितु अविनाशी ब्रह्मपद है)'

यं वेदगुह्यं सगुणं गुणानामाधारभूतं सचराचरस्य।
यं सूर्यवैश्वानरतुल्यतेजसं तं वासुदेवं शरणं प्रपद्ये॥
(पद्मपुराणे)

'जो वेदों के लिए भी गुप्त हैं, सगुण हैं, गुणों तथा चराचर जगत् के भी आधारभूत हैं, जो सूर्य और अग्नि के समान तेजस्विता से युक्त हैं, उन वासुदेव की मैं शरण ग्रहण करता हूँ,' ऐसी पद्मपुराण (के भूमिखण्ड) की उक्ति है।

अत्र श्रुतिः

तद्द्विविधं सगुणं निर्गुणञ्चेति। सगुणं मूर्तिध्यानम्।
निर्गुणमात्मयाथात्म्यम्॥

(शाण्डिल्योपनिषत्)

शाण्डिल्योपनिषत् का वचन है - 'वह ब्रह्म दो प्रकार का है, सगुण एवं निर्गुण। सगुण में साकार मूर्ति का ध्यान होता है, निर्गुण में आत्मा की यथावत् स्थिति के समान निराकार ध्यान होता है।'

तद्ब्रह्म विविधं वस्तु सगुणं निर्गुणं शिव॥
मायाश्रितो यः सगुणो मायातीतश्च निर्गुणः॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

ब्रह्मवैवर्तपुराण (के श्रीकृष्णजन्मखण्ड) में कहते हैं - 'हे शिव ! वस्तुतः वह ब्रह्म दो प्रकार का है, सगुण एवं निर्गुण। जो माया का आश्रय लेकर रहता है, वह सगुण है तथा माया से जो परे है, वह निर्गुण है।'

अत्र श्रुतिः

स्वरूपं द्विविधं चैव सगुणं निर्गुणात्मकम्॥

(गोपालतापिन्युपनिषत्)

सगुणं ध्यानमेतत्स्यादणिमादिगुणप्रदम्।
निर्गुणध्यानयुक्तस्य समाधिश्च ततो भवेत्॥

(योगतत्त्वोपनिषत्)

गोपालतापिन्युपनिषत् में कहते हैं कि उसका स्वरूप दो प्रकार का है, सगुण एवं निर्गुण। योगतत्त्वोपनिषत् की उक्ति है कि सगुण ब्रह्म का ध्यान अणिमा आदि सिद्धियों का गुण देता है जबकि निर्गुण ब्रह्म के ध्यान से युक्त व्यक्ति समाधि की स्थिति को प्राप्त करते हैं।

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||२२||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु त्रिधा भोक्ता भोग्यं प्रेरितारञ्च मत्वा ||२३||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो तीन प्रकार का है - भोक्ता, भोग्य एवं प्रेरक, ऐसा मानते हुए।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? जीवरूपेण भोक्ता, जगद्रूपेण भोग्यं, निर्विशेषेण प्रेरकः।

प्रत्येकं सर्ववस्तूनां कर्ता भोक्ता परात्परः।
अनादिनिधनो धाता सर्वं ब्रह्मात्मकं यतः॥
(योगवासिष्ठमहारामायणे)

किस प्रकार से ऐसा है ? जीवरूप से भोक्ता, संसाररूप से भोग्य एवं निर्विशेष ब्रह्मरूप से प्रेरक होता है। योगवासिष्ठ महारामायण (के निर्वाणप्रकरण) की उक्ति है -'सभी वस्तुओं का कर्ता और भोक्ता वह परात्पर ही है, जो सबों का भरण-पोषण करता है एवं स्वयं आदि और अन्त से रहित है, क्योंकि सबकुछ ब्रह्ममय ही है।'

क्षेत्रज्ञः प्रथमा मूर्तिः शिवस्य परमेष्ठिनः।
भोक्ता प्रकृतिवर्गस्य भोग्यस्येशानसंज्ञितः॥
(लिङ्गपुराणे)

लिङ्गपुराण (के उत्तरभाग) में कहते हैं - 'परमेष्ठी शिव की पहली मूर्ति का नाम क्षेत्रज्ञ है, जो ईशानसंज्ञक एवं भोग्य प्रकृतिवर्ग का भोक्ता है।'

सर्वेन्द्रियाद्यतीतत्वात्कर्ता भोक्ता न सन्मयः।
इन्द्रियान्तर्गतत्वात्तु कर्ता भोक्ता स एव हि॥
(योगवासिष्ठमहारामायणे)
हिरण्यगर्भः कर्तास्य भोक्ता विश्वस्य पूरुषः।
(लिङ्गपुराणे)

योगवासिष्ठ महारामायण (के स्थितिप्रकरण) में कहते हैं - 'सभी इन्द्रियों से अतीत होने की स्थिति में वह सद्रूपी चेतन कर्ता या भोक्ता नहीं होता है, इन्द्रियों के अन्तर्गत होने की स्थिति में वही कर्ता एवं भोक्ता बन जाता है।' लिङ्गपुराण (के उत्तरभाग) में कहते हैं - 'इस विश्व का कर्ता और भोक्ता हिरण्यगर्भ पुरुष है।'

स एव भोक्ता भोक्तव्यः स एव पुरुषोत्तमः।
विनियोगस्तु तस्यैव सर्वकर्मसु युज्यते॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के उत्तरार्ध में अध्याय नवम) की उक्ति है - 'वह सभी वस्तुओं का भोक्ता है और वस्तुओं के रूप में वही भोक्तव्य भी है। वही (क्षर एवं अक्षर) पुरुषों से उत्तम है, सभी कर्मों में उसी का विनियोग किया जाता है।'

शिवो दाता शिवो भोक्ता शिवः सर्वमिदं जगत्॥
(अग्निपुराणे)
निर्गुणङ्गुणभोक्तृ च।
(श्रीमद्भगवद्गीतायाम्)

अग्निपुराण का कथन है - 'शिव ही अभीष्ट को देने वाले हैं, संसार के भोक्ता हैं एवं शिव ही सम्पूर्ण संसार हैं।' श्रीमद्भगवद्गीता में उक्ति है - 'वह निर्गुण है और गुणों का उपभोक्ता भी है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - भोज्यरूपतया प्रकृतिर्माया भोजनमित्युच्यते पुरुषरूपेण तां भुङ्क्ते इति भोक्ता। चापि पालकत्वात् भोक्ता। परमानन्दसन्दोहसम्भोगाद्वा भोक्ता।

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - भोज्यरूप से प्रकृति माया भोजन कहलाती है, ब्रह्म पुरुषरूप से उसका उपभोग करता है, इसीलिए भोक्ता है। और भी कहते हैं कि संसार का पालन करने से भोक्ता है।

परमानन्द से युक्त होने एवं उसका उपभोग करने से भोक्ता है।'

भोक्तारं भोज्यभूतञ्च स्रष्टारं सृष्टिमेव च।
कार्यकर्तृस्वरूपं तं प्रणताः स्मः परं पदम्॥
(वह्निपुराणान्तर्गते नान्दपुराणे)

वह्निपुराण के अन्तर्गत नान्दपुराण में कहते हैं - 'उपभोग करने वाले - भोक्ता और उपभुक्त होने वाले - भोज्य, सृजन करने वाले स्रष्टा और सृष्ट होने वाले सृष्टि, एवंविध कार्य एवं कर्तृस्वरूप वाले परमपद के समक्ष हम प्रणत हैं।'

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति॥
(श्रीमद्भगवद्गीतायाम्)

श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं - 'यज्ञ एवं तपस्या का भोक्ता, सभी लोकों का महान् ईश्वर और सभी प्राणियों का हितैषी, ऐसा मुझे जानकर साधक शान्ति को प्राप्त करता है।'

अत्र श्रुतिः

भोक्ता भोग्यं प्रेरितारञ्च मत्वा सर्वं प्रोक्तं त्रिविधं ब्रह्ममेतत्॥
(श्वेताश्वतरोपनिषत्/नारदपरिव्राजकोपनिषत्)

श्वेताश्वतरोपनिषत् (के प्रथम अध्याय) एवं नारदपरिव्राजकोपनिषत् (के नवम उपदेश) में कहते हैं - 'भोक्ता, भोग्य एवं प्रेरकरूप से मानकर सब कुछ तीन प्रकार का ब्रह्म कहा गया है।'

त्रिषु धामसु यद्भोग्यं भोक्ता भोगश्च यद्भवेत्।
तेभ्यो विलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोऽहं सदाशिवः ॥
(कैवल्योपनिषत्)

कैवल्योपनिषत् में उक्ति है - 'तीनों लोकों में जो कुछ भी भोग्य है, जो भी भोक्ता है और जो कुछ भोग होगा, उनसे विलक्षण, उनका साक्षी मैं चिन्मात्र सदाशिव हूँ।'

स एव प्रकृतौ लीनो भोक्ता यः प्रकृतेर्यतः।
तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परस्स महेश्वरः॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण (की कैलाससंहिता) में कहते हैं - 'वही प्रकृति का भोक्ता है अतएव वह प्रकृति में लीन है। उस प्रकृति में लीन चेतन से भी जो परे है, वह महेश्वर है।'

भोग्या विश्वेश्वरी देवी महेश्वरपतिव्रता।
प्रोच्यते भगवान् भोक्ता कपर्दी नीललोहितः॥
मन्ता विश्वेश्वरो देवः शङ्करो मन्मथान्तकः।
प्रोच्यते मतिरीशानी मन्तव्या च विचारतः॥
(कूर्मपुराणे)

कूर्मपुराण (के पूर्वभाग के बारहवें अध्याय) में कहते हैं - 'महेश्वर को अपना पति मानने वाली पतिव्रता, विश्व की स्वामिनी देवी भोग्या कही गयी हैं एवं जटाओं वाले भगवान् नीललोहित रुद्र भोक्ता कहे गए हैं।

कामदेव का अंत करने वाले, विश्व के स्वामी देव शंकर मन्ता हैं और उनकी ईशानी शक्ति मति कही गयी हैं जिनका विचारपूर्वक मनन किया जाना चाहिए।'

भोक्ता भोग्यं प्रेरयिता मन्तव्यं त्रिविधं स्मृतम्॥
(शिवपुराणे)
भोक्तारं प्रथमं वर्णं विद्धि भोग्यं द्वितीयकम्।
(लक्ष्मीतन्त्रे)

शिवपुराण (की वायवीयसंहिता) में कहते हैं - ' मन्तव्य तीन प्रकार का कहा गया है - भोक्ता, भोग्य एवं प्रेरक '। 'हंस मन्त्र का पहला वर्ण (हं) भोक्ता है और दूसरे वर्ण (सः) को भोग्य जानो', ऐसा लक्ष्मीतन्त्र का वचन है।

सर्वेषां दिव्यानां प्रेरयिता ईशान इति।
(पञ्चब्रह्मोपनिषत्)
अतः प्रेरयिता देवः समस्तस्य जनार्दनः॥
(अहिर्बुध्न्यसंहितायाम्)

पञ्चब्रह्मोपनिषत् की उक्ति है - 'सभी दिव्य तत्त्वों का प्रेरक ईशान है।' अहिर्बुध्न्यसंहिता में कहते हैं - 'अतएव सबके प्रेरक वे जनार्दन हैं।'

भोक्ता भोज्यं प्रेरयिता वस्तुत्रयमिदं स्मृतम्।
अखण्डे ब्रह्मचैतन्ये कल्पितं गुणभेदतः॥
अपि च

शरीरात्पृथगात्मानमात्मभ्यः पृथगीश्वरम्।
प्रेरकं यो विजानाति पिण्डज्ञानीति कथ्यते॥
(सिद्धान्तशिखामणेस्तत्त्वप्रदीपिकायाम्)

सिद्धांतशिखामणि की तत्त्वप्रदीपिका में कहते हैं - 'भोक्ता, भोग्य और प्रेरक, ये तीन वस्तु/भाव अखण्ड ब्रह्मसंज्ञक चेतन में गुणभेद के आधार पर कल्पित किये गए हैं। और भी कहते हैं कि शरीर से आत्मा अलग है और आत्मा से ईश्वर (स्थितिभेद से) अलग है। वह ईश्वर ही प्रेरक है, उसे जो जानता है, उसे पिण्डज्ञानी कहा जाता है।'

धर्माधर्मस्य कर्तृत्वे प्रेरको हृदि संस्थितः।
तमहं शरणं प्राप्तो न मे बन्धोऽस्ति कर्त्तृता॥
(स्वच्छन्दतन्त्रे)

'धर्म और अधर्म को करने में जो (ब्रह्म) प्रेरकरूप से हृदय में स्थित है, मैं उसकी शरण को प्राप्त हूँ, अतएव न मुझमें कोई कर्मबन्धन है और न कोई कर्ताभाव ही है', ऐसा स्वच्छन्दतन्त्र का कथन है।

सर्वात्मा सर्वलोकेशः प्रेरकः पापनाशनः॥
(श्रीरामसहस्रनामस्तोत्रे)
गोपात्मा प्रेरकः साक्षी वृन्दावननिवासकृत्॥
(श्रीराधाकृष्णसहस्रनामस्तोत्रे)
योऽयं कालाख्यचक्रस्य प्रेरकः पुरुषोऽव्ययः॥
(अहिर्बुध्न्यसंहितायाम्)

श्रीरामसहस्रनामस्तोत्र में कहते हैं - 'सबों की आत्मा, सभी लोकों के स्वामी, प्रेरणा देने वाले और पापों का नाश करने वाले हैं।' श्रीराधाकृष्णसहस्रनामस्तोत्र में कहते हैं - 'गोपों की आत्मा, प्रेरणा देने वाले, साक्षी और वृन्दावन में निवास करने वाले हैं।' अहिर्बुध्न्यसंहिता में कहते हैं - 'काल नाम के चक्र का जो यह प्रेरक है, वह अविनाशी पुरुष (ब्रह्म) है।'

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||२४||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु
चतुर्धाव्यक्तप्राज्ञतैजसवैश्वानरञ्च ||२५||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो चार प्रकार का है - अव्यक्त, प्राज्ञ, तैजस एवं वैश्वानर।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? यथा नारायणीये नारायणभट्टः
अव्यक्तं ते स्वरूपं दुरधिगमतमं तत्तु शुद्धैकसत्त्वं
(नारायणीये)

किस प्रकार से ऐसा है ? जैसा कि नारायणीय (के ९९वें दशक) में आचार्य नारायणभट्ट कहते हैं - 'हे प्रभो ! आपका स्वरूप अव्यक्त है, अत्यन्त कठिनाई से ज्ञात होने वाला है और वह एकमात्र शुद्ध सत्व वाला है।'

एकाक्षरश्चतुर्भेदश्चतुर्यन्त्रैरलङ्कृतम्।
चतुष्कलङ्कलातीतं बिन्द्वतीत नमोऽस्तु ते॥
(शिवधर्म-पूर्व-पुराणे)

शिवधर्म *पूर्व* पुराण में संस्तुति है - 'एकाक्षर (परमाक्षर ब्रह्म) चार प्रकार का है, चार यन्त्र (स्वचालित अवस्था) से सुशोभित है, चार कलाओं से युक्त होकर भी कला एवं बिन्दु से अतीत है, ऐसे तुझ ब्रह्म के लिए नमस्कार है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - यद्यप्यनेकमूर्तित्वमस्य तथाप्ययमीदृश एवेति न व्यज्यत इति अव्यक्तः।

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'यद्यपि इसकी अनेक मूर्तियाँ हैं, किन्तु फिर भी 'यह ऐसा ही है' इस प्रकार से निश्चितार्थ में लब्ध न होने से अव्यक्त है।'

अव्यक्तं कारणं यत्तदक्षरं परमं पदम्।
निर्गुणं शुद्धविज्ञानं तद्वै पश्यन्ति सूरयः॥
(कूर्मपुराणे)

कूर्मपुराण (के उत्तरभाग) में वर्णन है - 'जो व्यक्त नहीं है, सबों का कारण है, जो कभी नष्ट नहीं होता, जो परमपद है, निर्गुण है, शुद्ध विज्ञानरूप है, उसे ही ज्ञानीजन देखते हैं।'

अव्यक्तं कारणं प्राहुरानन्दं ज्योतिरक्षरम्।
अहमेव परं ब्रह्म मत्तो ह्यन्यन्न विद्यते॥
(कूर्मपुराणे)

कूर्मपुराण (के उत्तरभाग) में कहते हैं - ' ज्योतिष्मान् आनन्दरूप अविनाशी अव्यक्त को सबों का कारण कहते हैं। मैं ही परब्रह्म हूँ, मेरे अतिरिक्त कोई दूसरा विद्यमान नहीं है।'

दृश्यादृश्ये ह्यनुगतस्तत्स्वभावे महाद्युते।
अव्यक्तं चैव तद्ब्रह्म बुध्यते तात केवलम्॥
(ब्रह्मपुराणे)
दृश्यादृश्यौ ह्यनुगतावुभावेव महाद्युती।
अव्यक्तं तत्तु तद्ब्रह्म बुध्यते तात केवलम्॥
(महाभारते शान्तिपर्वणि)
अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
(श्रीमद्भगवद्गीतायाम्)

ब्रह्मपुराण में ( राजा करालजनक के प्रति वशिष्ठ मुनि की) उक्ति है - 'हे तेजसम्पन्न तात ! दृश्य (जगत्) और अदृश्य (आत्मा) में, और उनके अनुगामी स्वभावों में जो अव्यक्त है, उसे ही ब्रह्म जानो।' यही बात

महाभारत के शान्तिपर्व में भी आयी है। श्रीमद्भगवद्गीता में वचन है - 'उस परमगति को ज्ञानीजन अव्यक्त (व्यक्त न होने वाला), अक्षर (क्षरित न होने वाला), ऐसा कहते हैं।'

अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम्।
प्रधानं पुरुषस्तस्मान्निर्म्ममे विश्वमीश्वरः॥
(ब्रह्मपुराणे)

ब्रह्मपुराण में कहते हैं - ', उस विश्व को ईश्वर ने प्रधान पुरुष से उद्भासित किया जो अव्यक्त कारणरूप नित्य है, जो सत् (चेतन) और असत् (जगत्) रूप से विद्यमान है।'

अव्यक्तं वै यस्य योनिं वदन्ति व्यक्तं देहं कालमन्तर्गतञ्च।
(वायुपुराणे)

वायुपुराण (के उत्तरार्द्ध) में वर्णन है - 'जिसकी योनि (उत्पत्तिस्थान) व्यक्त नहीं है, जिसका देह (संसार) व्यक्त और काल के अधीन है, वही ब्रह्म है।'

अव्यक्तं वै यस्य योनिं वदन्ति।
(ब्रह्माण्डपुराणे)
अव्यक्तं चैवास्य योनिं वदन्ति।
(गोपालहृदये)

अव्यक्त योनि वाले उस ब्रह्म का वर्णन ब्रह्माण्डपुराण (के उत्तरभाग में) एवं गोपालहृदय आदि में भी वर्णित है।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥
(श्रीमद्भगवद्गीतायाम्)

श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं - 'मुझ सर्वश्रेष्ठ अविनाशी के परमभाव को नहीं जानते हुए बुद्धिहीन जन मुझ अव्यक्त को व्यक्तभाव से आबद्ध मानते हैं ।'

सर्वोपसर्गरहितं सर्वतो व्यापकं शिवम् ।
अव्यक्तं परतो नित्यं केवलं द्वैतवर्जितम् ॥
(स्कन्दपुराणे प्रभासखण्डे)

स्कन्दपुराण के प्रभासखण्ड में कहते हैं - ' सभी प्रकार के उपसर्ग (विकार या दोष) से रहित, सभी ओर स्थित शिव, जो द्वैत से रहित, नित्य और अव्यक्त हैं, वह ब्रह्म हैं ।'

यथेदं कुरुते व्यक्तं सुसूक्ष्मं विश्वमीश्वरः ।
अव्यक्तं ग्रसते व्यक्तं प्रत्याहारे च कृत्स्नशः ॥
(ब्रह्माण्डपुराणे)

ब्रह्माण्डपुराण (के उत्तरभाग) में कहते हैं - 'इस अत्यन्त सूक्ष्म संरचना वाले विश्व को जैसे ईश्वर बनाते हैं, वैसे ही वे अव्यक्त धीरे धीरे क्रमशः इस व्यक्त जगत् का अधिग्रहण भी कर लेते हैं ।'

ततः परमेष्ठी व्यजायत। सोऽभिजिज्ञासत किं मे कुलं किं मे
कृत्यमिति। तं ह वागदृश्यमानाभ्युवाच भो भो प्रजापते
त्वमव्यक्तादुत्पन्नोऽसि व्यक्तं ते कृत्यमिति।
(अव्यक्तोपनिषत्)

अव्यक्तोपनिषत् का वचन है - 'उससे परमेष्ठी (ब्रह्मा) का जन्म हुआ। जन्म के बाद उसने जिज्ञासा की, कि मेरा कुल (उत्पत्तिकारण) क्या है और मेरा कर्म क्या है ? उसे एक अदृश्य वाणी ने कहा - हे प्रजापते ! तुम अव्यक्त (ब्रह्म) से उत्पन्न हुए हो, मैं तुम्हें व्यक्त (साकार) करती हूँ, तुम्हारा कर्म (संसार) व्यक्त है।'

अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम्।
निष्कलः पुरुषस्तस्मात्सम्बभूवात्मयोनिजः॥
(हरिवंशपुराणे)
अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम्।
प्रधानं पुरुषं तस्मान्निर्ममे विश्वमीश्वरम्॥
(हरिवंशपुराणे)

हरिवंशपुराण (के अन्तर्गत भविष्यपर्व) की उक्ति है - 'जो सत् (चेतन) और असत् (जगत्) के रूप में है, अव्यक्त है, सबों का कारण है, नित्य है, कलातीत है, उस पुरुष से स्वोद्भूत आत्मयोनिज (ब्रह्माजी) उत्पन्न हुए।' हरिवंशपुराण (के हरिवंशपर्व) में कहते हैं - 'अव्यक्त, सबों का कारण, जो सत् और असद्रूप है, उसे प्रधान पुरुष कहते हैं, जिससे विश्व को बनाया।'

अतः परं सूक्ष्मतमव्यक्तं निर्विशेषणम्।
अनादिमध्यनिधनं नित्यं वाङ्मनसः परम्॥
(श्रीमद्भागवतमहापुराणे)

श्रीमद्भागवत महापुराण (के द्वितीय स्कन्ध) में कहते हैं - 'इससे परे सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, अव्यक्त, किसी भी विशेषता से रहित, आदि-मध्य-अन्त से रहित, सदैव रहने वाला, वाणी और मन से परे ब्रह्म है।'

अव्यक्तं कारणं यद्यन्नित्यं सदसदात्मकम्।
महदादिविशेषान्तं सृजतीति विनिश्चयः॥
(वायुपुराणे)

वायुपुराण (के पूर्वार्द्ध के प्रथम अध्याय) में कहते हैं - ' जो अव्यक्त है, सबों का कारण है, नित्य है, सत् और असत् रूप है, वह महत् (प्रपञ्चात्मकावरण) आदि विशेष रचनाओं का नियामक है, उसकी निश्चयपूर्वक रचना करता है।'

नष्टे लोके द्विपरार्धावसाने महाभूतेष्वादिभूतं गतेषु।
व्यक्तेऽव्यक्तं कालवेगेन याते भवानेकः शिष्यते शेषसंज्ञः॥
(श्रीमद्भागवतमहापुराणे)

श्रीमद्भागवत महापुराण (के दशम स्कन्ध) में स्तुति वर्णित है - 'द्विपरार्ध (ब्रह्मा की आयु/ ७२००० कल्प) के समाप्त होने पर जब महाभूत (कार्य) आदिभूत (कारण) में लीन हो जाते हैं, काल के वेग से

व्यक्त (संसार) अव्यक्त (ब्रह्म) में लीन हो जाता है तब एक आप शेषसंज्ञक (ब्रह्म) ही शेष रहते हैं।'

अव्यक्तं तु परं ब्रह्म व्यक्तं शब्दमयं स्मृतम्।
(भविष्यपुराणे)

भविष्यपुराण (के प्रतिसर्गपर्व - चतुर्थखण्ड) का वचन है - 'जो रूप अव्यक्त है, वह परब्रह्म है और जो व्यक्त है, उसे शब्दब्रह्म कहा गया है।'

यदा नास्ति स्वयं कर्ता कारणं न कुलाकुलम्।
अव्यक्तं च परं ब्रह्म अनामा विद्यते तदा॥
(सिद्धसिद्धान्तपद्धतावन्यत्र च)

सिद्धसिद्धान्तपद्धति और अन्यत्र भी, यह कहा गया है - 'जब कोई कर्ता, कारण, कुल या अकुल नहीं होता, तब उस स्थिति में अव्यक्त और नामरहित परब्रह्म रहता है।'

वासुदेवः परं ब्रह्म तन्मूर्तिः पुरुषः परः।
अव्यक्तो निर्गुणः शान्तः पञ्चविंशात्परोऽव्ययः॥
(सूर्यसिद्धान्ते)

सूर्यसिद्धान्त (के बारहवें अध्याय) का कथन है - 'वासुदेव परब्रह्म हैं, उनकी मूर्ति ही पर (दूसरा) पुरुष है। वे परब्रह्म अव्यक्त हैं, निर्गुण, शान्त और पच्चीस तत्त्वों से परे अविनाशी हैं। '

मनः प्रलीयते बुद्धौ बुद्धिश्चात्मनि लीयते।
अव्यक्ते लीयते चात्मा अव्यक्तः पुरुषे परे॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराणे)

विष्णुधर्मोत्तरपुराण (के प्रथम खण्ड) में कहते हैं - 'मन बुद्धि में लीन हो जाता है, बुद्धि आत्मा में लीन हो जाती है, आत्मा अव्यक्त में लीन होती है और अव्यक्त परमपुरुष में लीन हो जाता है।'

अव्यक्तः शाश्वतश्चैव तस्य सर्वमिदं जगत्।
कर्त्ता चैव विकर्त्ता च संहर्ता च महांस्तु यः॥
(स्कन्दपुराणे)
यः स्रष्टा सर्वभूतानां कल्पान्तेषु पुनः पुनः।
अव्यक्तः शाश्वतो देवस्तस्य सर्वमिदञ्जगत्॥
(हरिवंशपुराणे)
स स्रष्टा सर्वभूतानां कल्पान्ते तु पुनः पुनः।
अव्यक्तः शाश्वतो देवस्तस्य सर्वमिदञ्जगत्॥
(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के अवन्तीखण्ड) में कहा गया है - 'वह ब्रह्म अव्यक्त है, शाश्वत है, सम्पूर्ण संसार उसी का है, वही इस संसार का कर्ता, विकर्ता और संहर्ता है, वही महान् है।' हरिवंशपुराण (के भविष्यपर्व) में उक्ति है -'जो शर्वरी (रात्रिप्रधान) कल्प के अन्त में सभी प्राणियों की बारम्बार रचना करते हैं, वह देवता (ब्रह्म) अव्यक्त है, अविनाशी है और उसका ही यह सम्पूर्ण संसार है।' यही बात स्कन्दपुराण (के अवन्तीखण्ड) में भी कही गयी है।

अत्र श्रुतिः

विश्वश्च तैजसः प्राज्ञ एव च

(वराहोपनिषत्)

चैतन्यं तैजस इति निगदन्ति मनीषिणः।
तेजोमयान्तःकरणोपाधित्वेनैव तैजसः॥

(सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसङ्ग्रहे)

वराहोपनिषत् में चेतन की विश्व, तैजस एवं प्राज्ञ अवस्थाओं का संकेत है। सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह में कहते हैं - ' मनीषीगण उसे चैतन्य तैजस, ऐसा कहते हैं। तेजोमय अन्तःकरण की उपाधि से युक्त होने पर वह तैजस है।'

आद्या जागरिताऽवस्था द्वितीया स्वप्नसंज्ञिका।
तृतीया सुप्तिरूपान्या तुरीया चित्सुखात्मिका॥
आद्याभिमानी विश्वाख्यो द्वितीयस्तैजसस्स्मृतः।
तृतीयः प्राज्ञ एतेभ्यो कूटस्थ इतरः प्रभुः॥
बहिःप्रज्ञो विभुर्विश्वो ह्यन्तःप्रज्ञस्तु तैजसः।
घनप्रज्ञस्तथा प्राज्ञ एक एव त्रिधा स्थितः॥

(ऋभुगीतायाम्)

ऋभुगीता का कथन है - 'चेतन की पहली अवस्था **जागृत** है, दूसरी को **स्वप्न** कहते हैं, तीसरी को **सुषुप्ति** और चौथी को **चित्सुख** कहते हैं। इन अवस्थाओं में प्रथमावस्था का अभिमानी **विश्व** कहलाता है, दूसरे का **तैजस** है, तीसरे को **प्राज्ञ** कहते हैं और इनसे पृथक् चौथे को

इनका स्वामी **कूटस्थ** कहते हैं। वह चेतन जब विश्व की स्थिति में होता है तो बाहर की ओर प्रज्ञा वाला होता है, तैजस में अन्दर की ओर प्रज्ञा वाला होता है, प्राज्ञ की अवस्था में दोनों ओर विस्तृत प्रज्ञा वाला हो जाता है, इस प्रकार से एक ही चेतन तीन प्रकार से स्थित होता है।'

स्वप्ने स्वस्थस्य जीवस्य वासनानन्त्यमीश्वरः।
उपादानीकृत्यमुख्यैः पूर्वोक्तैरेव तैजसः॥
कल्पयित्वा बहूनर्थान्दर्शयत्यखिलेश्वरः।
स्वप्नः सत्यस्ततो यस्मात्तद्भावीनफलसूचकः॥
शेषादिसर्वजीवानां योग्यकाले तथा चरन्।
तैजसः स्वप्नकृच्चेति जनस्य स्वप्नकृद्भवेत्॥
तत्तमोगुणमादाय प्राज्ञस्तत्सूक्ष्महृद्गतः।
जीवस्य लिङ्गबद्धस्य पादस्थस्य जगद्गुरोः॥
ध्यानावस्थां ददात्येवमेकास्यो देहयोनितः।
लिङ्गबद्धं ग्रसन्नर्धं मूर्च्छावस्थां प्रयच्छति॥
लिङ्गबद्धं मुखेस्थाप्य प्राज्ञोत्यल्पोन्यरूपतः।
यदाश्लिष्यति तं देवः तदा निद्रां प्रयच्छति॥
प्राज्ञो जीवेश्वरस्तं वै विना जीवोऽक्षमः स्मृतः।
प्राज्ञः कण्ठस्थितं प्राप्य जीवानां स्वप्नदो भवेत्॥
(प्रकाशसंहितायाम्)

प्रकाशसंहिता में कहते हैं - 'अपने स्वप्न में स्थित जीव की वासनाओं को उपादान बनाकर उनका एवं बाकी सबों का स्वामी ईश्वर **तैजस**

कल्पना करके बहुत से प्रकार के स्वप्न को दिखाता है, जिसमें भावी घटनाओं के फल की सूचना होती है इसीलिए इस दृष्टिकोण से स्वप्न भी सत्य ही है। शेष आदि समस्त जीवों को अपने अपने योग्य काल में भ्रमण करते हुए **तैजस** स्वप्नकर्ता बनकर लोगों के स्वप्न का निर्माणकर्ता बनता है।

उसके तमोगुण का आश्रय लेकर उसके सूक्ष्म हृदय में निवास करने वाला **प्राज्ञ**, जगद्गुरु (वासुदेव नारायण) के चरणों में स्थित लिंग (साकारचिह्न) बद्ध जीव को देहयोनि से ही ध्यानावस्था दे देता है और उसे ग्रस्त करता हुआ मूर्छित (सुषुप्त) कर देता है।

लिंगबद्ध जीव को अपने मुख में स्थापित करके अत्यन्त सूक्ष्म **प्राज्ञ** अन्य रूप (आवरण) से जब उसका आलिंगन करता है तो चेतनदेव को निद्रा आ जाती है। यह **प्राज्ञ** ही जीवों का ईश्वर है, इसके बिना जीव असमर्थ हैं, यही कंठ में स्थित होकर जीवों को स्वप्न दिखाता है।'

प्राज्ञस्तु कारणात्मा स्यात्सूक्ष्मदेही तु तैजसः॥
स्थूलदेही तु विश्वाख्यस्त्रिविधः परिकीर्तितः॥
(श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणे)

श्रीमद्देवीभागवत महापुराण (के सप्तम स्कन्ध) में कहते हैं - 'प्राज्ञ कारणशरीर में स्थित चेतनावस्था है, सूक्ष्मदेह में जो चेतनावस्था है, वह तैजस है, स्थूल देह की चेतनावस्था को विश्व कहते हैं, यह तीन प्रकार का बताया गया है।'

अत्र श्रुतिः
जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तेष्वेकशरीरस्य जाग्रत्काले विश्वः स्वप्नकाले तैजसः
सुषुप्तिकाले प्राज्ञः अवस्थाभेदादवस्थेश्वरभेदः
कार्यभेदात्कारणभेदः ॥
(नारदपरिव्राजकोपनिषत्)

नारदपरिव्राजकोपनिषत् (के पञ्चम उपदेश) में कहते हैं - 'एक ही शरीर की जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति की स्थिति में चेतन जागृतिकाल में विश्व, स्वप्नकाल में तैजस एवं सुषुप्तिकाल में प्राज्ञ कहलाता है, अवस्था के भेद से अवस्था के स्वामी में भी भेद हो जाता है, कार्य के भेद से कारण में भेद हो जाता है।'

विश्वतैजसप्राज्ञात्मानश्चेति।
विश्वो हि स्थूलभुङ्नित्यं तैजसः प्रविविक्तभुक्।
आनन्दभुक्तया प्राज्ञः सर्वसाक्षीत्यतः परः ॥
(योगचूडामण्युपनिषत्)

योगचूडामण्युपनिषत् में वर्णन है - 'आत्मा की विश्व, तैजस और प्राज्ञ, ऐसी अवस्थाएं हैं। स्थूल जगत् का उपभोग करने की स्थिति में विश्व कहलाता है, सूक्ष्म जगत् का असंश्लिष्ट भाव से उपभोग करने की स्थिति में तैजस तथा आनन्दरूप से उपभोग करने पर प्राज्ञ कहलाता है। इससे परे इनका साक्षी (निर्विकल्प चेतन) है।'

परं ब्रह्मानुसन्दध्याद्विश्वादीनां क्रमक्रमात्।
स्थूलत्वात्स्थूलभुक्त्वाच्च सूक्ष्मत्वात्सूक्ष्मभुक् परम् ॥

एकत्वानन्दभोगाच्च सोऽयमात्मा चतुर्विधः ।
चतुष्पाज्जागरितः स्थूलः स्थूलप्रज्ञो हि विश्वभुक् ॥
एकोनविंशतिमुखः साष्टाङ्गः सर्वगः प्रभुः ।
स्थूलभुग्चतुरात्माथ विश्वो वैश्वानरः पुमान् ॥
विश्वजित्प्रथमः पादः स्वप्नस्थानगतः प्रभुः ।
सूक्ष्मप्रज्ञः स्वतोऽष्टाङ्ग एको नान्यः परन्तप ॥
सूक्ष्मभुग्चतुरात्माथ तैजसो भूतराडयम् ।
हिरण्यगर्भः स्थूलोऽन्तर्द्वितीयः पाद उच्यते ॥
कामं कामयते यावद्यत्र सुप्तो न कञ्चन ।
स्वप्नं पश्यति नैवात्र तत्सुषुप्तमपि स्फुटम् ॥
एकीभूतः सुषुप्तस्थः प्रज्ञानघनवान्सुखी ।
नित्यानन्दमयोऽप्यात्मा सर्वजीवान्तरस्थितः ॥
तथाप्यानन्दभुग्चेतोमुखः सर्वगतोऽव्ययः ।
चतुरात्मेश्वरः प्राज्ञस्तृतीयः पादसंज्ञितः ॥
एष सर्वेश्वरश्चैष सर्वज्ञः सूक्ष्मभावनः ।
एषोऽन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययौ ॥
भूतानां त्रयमप्येतत्सर्वोपरमबाधकम् ।
तत्सुषुप्तं हि यत्स्वप्नं मायामात्रं प्रकीर्तितम् ॥
चतुर्थश्चतुरात्मापि सच्चिदेकरसो ह्ययम् ।
तुरीयावसितत्त्वाच्च एकैकत्वानुसारतः ॥

(नारदपरिव्राजकोपनिषत्)

नारदपरिव्राजकोपनिषत् का वचन है - 'विश्व आदि क्रम से क्रमशः परब्रह्म का अनुसन्धान करना चाहिए, स्थूल जगत् का उपभोग करने से स्थूल एवं सूक्ष्म का उपभोग करने से सूक्ष्म होता है। यह चेतन एक ही है किन्तु आनन्द आदि उपभोगों के समय चार प्रकार का हो जाता है, इसके क्रमशः चार चरण हैं, स्थूल अवस्था को जागृत कहते हैं, जिसमें यह विश्वभुक् बनकर स्थूलबुद्धि वाला होता है। यह इक्कीस मुखों वाला (पञ्चभूत, दशेन्द्रिय, पञ्चतन्मात्रा और एक मन) एवं आठ अंगों वाला (घृणा, शंका, भय, लज्जा, जुगुप्सा, कुल, शील एवं जाति) , सर्वत्र विचरण करने वाला, सबका स्वामी, स्थूल जगत् का उपभोग करने वाला, एक होकर भी चार आत्मरूप का प्रदर्शन करने वाला यह चेतनपुरुष विश्व या वैश्वानर कहलाता है।

प्रथम चरण का अपने उत्कृष्ट स्थान में स्थित स्वामी विश्वजित् है, सूक्ष्म आयाम की ओर प्रज्ञा रखने वाला वह आठ अंगों वाला चेतन एक ही है, अन्य नहीं। स्वयं को चार रूपों में प्रकाशित करने वाला वह आत्मा महाभूतों का स्वामी है, सूक्ष्म जगत् का उपभोग करने के समय वह तैजस कहाता है। यही दूसरा चरण है, इसे स्थूल आयाम के अन्दर (सूक्ष्म रूप से) रहने वाला हिरण्यगर्भ भी कहते हैं। जब तक काम की कामना करता है, तब तक यह सो नहीं सकता है और इस स्थिति में स्वप्न भी नहीं देख पाता और सुषुप्तावस्था में चला जाता है। यह एकीभूत चेतन सुषुप्ति की अवस्था में विस्तृत प्रज्ञा वाला एवं सुखी होकर नित्य आनन्दमय होकर सभी प्राणियों के अन्दर स्थित रहता है। वहां भी आनन्द का उपभोग करता हुआ, चितिरूप की ओर मुख वाला, सर्वत्र गति वाला अविनाशी, इन चारों स्वरूपों का स्वामी आत्मा

प्राज्ञ नामक तीसरा चरण कहा गया है। यह प्राज्ञ ही सबों का स्वामी है, सब कुछ जानने वाला है, सबों को भावित करने वाला है, यह सबों के उत्पत्ति-स्थिति आदि का कारण एवं अन्तर्यामी है। बाकी तीनों प्रकार की स्थितियों के प्राणियों की विरक्ति में बाधक होता है, इसके भी सुषुप्त होने पर जो स्वप्न आता है, उसे माया कहा गया है। इससे परे जो तुरीयावस्था है, उसमें आत्मा सच्चिद्रूपी एकरस (रसो वै सः = ब्राह्मी स्थिति) को प्राप्त रहता है और सभी शेष स्थितियों की एकात्मकता का संचालन करता है।'

सर्वं ह्येतद्ब्रह्म । अयमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा चतुष्पात् ॥
जागरितस्थानो बहिःप्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविंशतिमुखः
स्थूलभुग्वैश्वानरः प्रथमः पादः ॥स्वप्नस्थानोऽन्तःप्रज्ञः सप्ताङ्ग
एकोनविंशतिमुखः प्रविविक्तभुग्तैजसो द्वितीयः पादः ॥ यत्र सुप्तो
न कञ्चन कामं कामयते न कञ्चन स्वप्नं पश्यति तत्सुषुप्तम्।
सुषुप्तस्थान एकीभूतः प्रज्ञानघन एवानन्दमयो ह्यानन्दभुक्
चेतोमुखः प्राज्ञस्तृतीयः पादः ॥ एष सर्वेश्वर एष सर्वज्ञ
एषोऽन्तर्यामि एष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययौ हि भूतानाम्॥
नान्तःप्रज्ञं न बहिःप्रज्ञं नोभयतःप्रज्ञं न प्रज्ञं नाप्रज्ञं न
प्रज्ञानघनमदृश्यमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यम -
व्यपदेश्यमेकात्मप्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमं शान्तं शिवमद्वैतञ्चतुर्थं
मन्यन्ते। स आत्मा स विज्ञेयः ॥
(रामोत्तरतापिन्युपनिषत्/माण्डूक्योपनिषत्)

'यह सब कुछ ब्रह्म है। यह आत्मा ब्रह्म है और यह आत्मा चार चरणों वाला है। जागृत अवस्था में बहिर्मुखी प्रज्ञा वाला, सात अंगों और इक्कीस मुख वाला, स्थूल जगत् का उपभोग करने वाला **वैश्वानर** प्रथम पाद है। स्वप्न की स्थिति में अन्तर्मुखी प्रज्ञा वाला, सात अंगों एवं इक्कीस मुखों वाला सूक्ष्मविभाग का उपभोग करने वाला **तैजस** दूसरा पाद है। ऐसी स्थिति, जिसमें सोने पर भी न कोई कामना करता है, न कोई स्वप्न देखता है, वह सुषुप्त है। सुषुप्तावस्था में चेतन एकीभूत होकर विस्तृत प्रज्ञान वाला, आनन्दमय, आनन्द का ही उपभोग करने वाला, चेतना की ओर मुख करता है, वह **प्राज्ञ** तीसरा पाद है।

यह प्राज्ञ सबों का स्वामी, सब कुछ जानने वाला, अन्तर्यामी, सभी प्रकार के भूतों की उत्पत्ति आदि का कारण है। जो न अन्तर्मुखी प्रज्ञा वाला है, न बहिर्मुखी प्रज्ञा वाला है, न दोनों ही ओर की प्रज्ञा वाला है, न प्रज्ञा से युक्त है और न प्रज्ञा से रहित है, न समष्टि प्रज्ञा वाला है, अदृश्य है, व्यवहार से परे है, ग्रहण और लक्षण से परे है, उद्देश्य से रहित है, सभी स्थितियों को एकीभूत करने वाला, प्रपञ्च (संसार) का शमन करने वाला, कल्याणकारी, शान्त, **अद्वितीय चेतन** चौथा पाद बताया गया है, उसे ही आत्मा जानना चाहिये', ऐसा रामोत्तरतापिन्युपनिषत् एवं माण्डूक्योपनिषत् का वचन है।

विश्वेन रहितं तद्वत्तैजसेन विवर्जितम्।
प्राज्ञेन रहितञ्चैव तुरीयं परमाक्षरम्॥
(गरुडपुराणाचारकाण्डे)

गरुडपुराण के आचारकाण्ड में कहते हैं - 'विश्व से रहित, तैजस से वर्जित और प्राज्ञ से भी रहित तुरीयावस्था परमाक्षर ब्रह्म की होती है।' तात्पर्य है कि अव्यक्त परमाक्षर की स्थिति में शेष सभी विश्वादि का विलोप हो जाता है।

अकाराक्षरसम्भूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः ।
उकाराक्षरसम्भूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः ॥
प्राज्ञात्मकस्तु भरतो मकाराक्षरसम्भवः ।
अर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रहः ॥
श्रीरामसानिध्यवशाज्जगदाधारकारिणी ।
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणी सर्वदेहिनाम् ॥
सा सीता भवति ज्ञेया मूलप्रकृतिसंज्ञिता ।
प्रणवत्वात्प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्मवादिनः ॥
(रामपूर्वतापिन्युपनिषत्)

रामपूर्वतापिन्युपनिषत् में कहते हैं - 'प्रणव के अन्तर्गत अकाररूपी अक्षर से विश्वसंज्ञक सौमित्रि (लक्ष्मण) उत्पन्न हुए, उकाररूपी अक्षर से तैजस रूप वाले शत्रुघ्न का जन्म हुआ। प्राज्ञस्वरूपी भरत मकाररूपी अक्षर से सम्भूत हुए और प्रणव की अर्द्धमात्रा आनन्दमय ब्रह्म श्रीराम हैं। श्रीराम के सानिध्य के कारण संसार की आधाररूपा, सभी देहधारियों की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार की हेतु, मूलप्रकृति सीता जी हैं। ब्रह्मवादी कहते हैं कि प्रकृति प्रणव से ही है।'

विशुद्धं बोधवन्नित्यमजमव्ययमक्षयम्।
अव्यक्तमविकार्यं यत्तद्विष्णोः परमं पदम्॥
(वह्निपुराणान्तर्गते नान्दपुराणे)

वह्निपुराण के अन्तर्गत नान्दपुराण में कहते हैं - 'विशुद्ध, बोध कराते रहने वाला, नित्य, जन्मादि से रहित, व्यय या क्षय न होने वाला, अव्यक्त और अविकार्य जो तत्त्व या पद है, वही विष्णु का परम पद है।'

साङ्ख्यमते सर्वकारणं रूपादिहीनतया चक्षुराद्यगोचरं प्रधानं महदादि। महतः परमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषः पर *इति कठोपनिषदि*। विश्वान्नरानितो लोकाल्लोकान्तरं नयति। अनेन विश्वानराणां नेतृत्वेन सम्पद्यन्ते वा कर्मार्थप्रणेतृत्वेन सम्पादिनोऽस्य वैश्वानरः।

सांख्यमत में सबों का कारण, रूप आदि से हीन, चक्षु आदि से ग्राह्य न होने वाला प्रधान महत् है। महत् से श्रेष्ठ अव्यक्त है, अव्यक्त से श्रेष्ठ परमपुरुष है, ऐसा कठोपनिषत् का वचन है। विश्व को, नरों को इस लोक से अन्य लोक में ले जाता है, इस अर्थ से विश्वसंज्ञक नरों का नेतृत्त्व सम्पादन करने अथवा कर्म का प्रणेता होकर अर्थादि का सम्पादन करने वाला वैश्वानर है।

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||२६||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् |

तत्तु पञ्चधाज्ञातज्ञातविज्ञाताविज्ञातसंज्ञातञ्च ||२७||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो पांच प्रकार का है - अज्ञात, ज्ञात, विज्ञात, अविज्ञात एवं संज्ञात।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? अगोचरत्वादज्ञातं भवति ज्ञानबोधेनावरणनाशेन ज्ञातं भवति विशिष्टयोगबलेनाचार्योपदेशबलेन विज्ञातं भवति विलक्षणत्वादविज्ञातं भवति एवं विधानेन सम्यग्बोधेन संज्ञातं भवति। श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - 'आत्मनि कर्तृत्वादिविकल्पविज्ञानं कल्पितमस्ति तद्वासनावगुण्ठितो जीवो विज्ञाता, तद्विलक्षणो विष्णुरविज्ञाता।' चाप्यविज्ञातमिति। ब्रह्म एतावदिति परिच्छेदज्ञानवता ब्रह्म अविज्ञातं भवतीति *केनोपनिषद्भाष्ये श्रीरङ्गरामानुजमुनिः*।

ऐसा किस प्रकार से है ? इन्द्रियों से अतीत होने के कारण अज्ञात होता है।ज्ञानबोध से जब आवरण हट जाता है तो ज्ञात होता है। विशिष्ट योगबल एवं आचार्य के द्वारा उपदेश के बल से विज्ञात होता है, विलक्षण होने से अविज्ञात होता है, इस प्रकार से सम्यक् बोध होने

पर संज्ञात होता है। श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'आत्मा में कर्तृत्व आदि का बोध काल्पनिक है, उसकी वासना से अवरुद्ध जीव विज्ञाता कहाता है, उस जीव से विलक्षण होने के कारण विष्णु अविज्ञाता हैं।' और भी, ब्रह्म अविज्ञात है, ब्रह्म इस-इस प्रकार का है, इस प्रकार से क्रमशः विवक्षा एवं परिच्छेदपूर्वक ज्ञान से ब्रह्म अविज्ञात होता है, ऐसा श्रीरंगरामानुजमुनि ने केनोपनिषत् भाष्य में कहा है।

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत ।
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ॥२८॥

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् ।
तत्तु षड्वा शुद्धविशुद्धाशुद्धप्रतिशुद्धसंशुद्धशुद्धातीतञ्च ॥२९॥

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो छः प्रकार का है - शुद्ध, विशुद्ध, अशुद्ध, प्रतिशुद्ध, संशुद्ध एवं शुद्धातीत।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? निर्लेपत्वेन शुद्धः, विकारातीतो विशुद्धः, मलविक्षेपावरणा-क्रान्तोऽशुद्धः, अशुद्धादप्यन्यस्थित्या ब्राह्म्या प्रतिरोधेन प्रतिशुद्धः, अशुद्धादपि ज्ञानेन संस्कृतः संशुद्धश्च

शुद्धात्मनोऽतीतत्वेन शुद्धातीतो भवति। यथोक्तम्,

नमोऽशुद्धाय शुद्धाय

(योगिनीतन्त्रे)

परमात्मा मुनिर्ब्रह्म नित्यबुद्धस्वभावतः ।
विशुद्धोऽयं तथा रुद्रः पुराणे शिव उच्यते ॥

(लिङ्गपुराणे)

किस प्रकार से ऐसा है ? निर्लेप होने से शुद्ध है, विकारों से अतीत होने से विशुद्ध है, मल-विक्षेप-आवरण से आक्रान्त होने पर (सोपाधि जीव की स्थिति में) अशुद्ध है, अशुद्ध होने पर भी दूसरी ब्राह्मी स्थिति में अशुद्धि का प्रतिरोधक होने से प्रतिशुद्ध है, अशुद्ध होने पर भी ज्ञान से संस्कृत होने पर संशुद्ध है, शुद्ध आत्मा से परे परमात्मा होने पर शुद्धातीत होता है। यथा योगिनीतन्त्र में कहते हैं कि अशुद्ध एवं शुद्ध के लिए नमस्कार है। लिङ्गपुराण की उक्ति है - 'वह सत्यवाक् ब्रह्म परमात्मा नित्य बुद्ध स्वभाव होने से, विशुद्ध होने एवं कष्टों का निवारण करने वाला होने से पुराणों में शिव अर्थात् कल्याणकारी के नाम से कहा जाता है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - 'गुणत्रयातीततया विशुद्धश्चासावात्मेति विशुद्धात्मा।'

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'सत्वादि गुणत्रयी से अतीत होने के कारण, विशुद्ध होने के कारण यह आत्मा विशुद्धात्मा है।'

अत्र श्रुतिः

आत्मा शुद्धः सदा नित्यः सुखरूपः स्वयंप्रभः ॥
अज्ञानान्मलिनो भाति ज्ञानच्छुद्धो भवत्ययम् ।
अज्ञानमलपङ्कं यः क्षालयेज्ज्ञानतो यतः ।
स एव सर्वदा शुद्धो नान्यः कर्मरतो हि सः ॥
(जाबालदर्शनोपनिषत्)

जाबालदर्शनोपनिषत् में कहते हैं -'आत्मा शुद्ध है, इसका अस्तित्व सदैव है, सुखरूपी है, स्वयं अपनी प्रभा से ही प्रकाशित है। अज्ञान के कारण मलिन सा प्रतीत होता है किन्तु ज्ञान से शुद्ध हो जाता है। अज्ञानरूपी गंदगी के कीचड़ को जो ज्ञान से धो देता है, वह कर्म में रत रहता हुआ भी सदैव शुद्ध रहता है, कोई अन्य नहीं।'

शुद्धो बुद्धो नित्यो निरञ्जनः ।
(हंसोपनिषत्)
एको व्यापी समः शुद्धो निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
(अग्निपुराणे विष्णुपुराणे च)

हंसोपनिषत् का कथन है - 'वह शुद्ध है, बुद्ध है, नित्य और निरंजन है।' 'एक ब्रह्म ही सर्वत्र व्याप्त, सम, शुद्ध, निर्गुण एवं प्रकृति से परे है', ऐसा अग्निपुराण एवं विष्णुपुराण में वर्णन है।

सत्यं ज्ञानमनन्तञ्च सच्चिदानन्दसंज्ञितम् ।
निर्गुणो निरुपाधिश्चाव्ययः शुद्धो निरञ्जनः ॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण (की कोटिरुद्रसंहिता) में कहते हैं - 'ब्रह्म सत्य है, ज्ञानरूप और अनन्त है, उसे सत्-चित्-आनन्द आदि शब्दों से इंगित किया गया है। वह गुण एवं उपाधि से रहित है, कभी क्षीण नहीं होता, शुद्ध एवं निरंजन है।'

शुद्धो वर्गस्तथाशुद्धो द्विविधं सृज्यमुच्यते।
शुद्धेतरे स्थिता स्थूला शुद्धे सूक्ष्मा प्रतिष्ठिता॥

अपि च

प्रथते हि यदा ब्रह्म शुद्धाशुद्धाख्यवर्त्मना।
माया नाम तदा त्वेषा ब्रह्मसङ्कल्परूपिणी॥

(लक्ष्मीतन्त्रे)

'सृष्टि शुद्ध एवं अशुद्ध दो प्रकार की है। जो अशुद्ध है, उसमें स्थूल जगत् स्थित है तथा शुद्ध आयाम में सूक्ष्मजगत् की स्थिति है। जब ब्रह्म इस शुद्ध और अशुद्ध नाम वाले प्रपंच का विनियोग करते हैं तो ब्रह्म के उस संकल्प का रूप धारण करके माया होती है', ऐसा लक्ष्मीतन्त्र का कथन है।

अत्र श्रुतिः

स्थाणुर्नित्यः सदानन्दः शुद्धो ज्ञानमयोऽमलः।

(सर्वसारोपनिषत्)

नित्यः शुद्धो बुद्धमुक्तस्वभावः सत्यः सूक्ष्मः संविभुश्चाद्वितीयः॥

(मैत्रेय्युपनिषत्)

निर्गुणः साक्षिभूतः शुद्धो निरवयवात्मा केवलः सूक्ष्मो निर्ममो
निरञ्जनो निर्विकारः शब्दस्पर्शरूपरसगन्धवर्जितः ...॥

(आत्मोपनिषत्)

सर्वसारोपनिषत् की उक्ति है - 'यह स्थाणु (निर्विकार कूट), नित्य, सदैव आनन्दित रहने वाला, शुद्ध, ज्ञानमय एवं मल से रहित है।' मैत्रेय्युपनिषत् का कथन है - 'वह नित्य स्थिति वाला, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव वाला, सत्य, सूक्ष्म, सबों का स्वामी और अद्वितीय है।' आत्मोपनिषत् का वचन है - 'यह निर्गुण है, साक्षी है, शुद्ध है, अवयव के विभाजन से रहित आत्मा केवल (अद्वितीय) है, सूक्ष्म और निर्मम (अनासक्त) है, निरंजन और निर्विकार है, शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्ध से वर्जित है।'

शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धश्च प्रशान्तः परमाक्षरः।
शिवश्च सुशिवश्चैव ध्रुवश्चाक्षरशम्भुराट्॥
(स्वच्छन्दतन्त्रे)

स्वच्छन्दतन्त्र में (दस प्रकार के कल्याणकारी ब्रह्मरूपों का वर्णन करते हुए) कहते हैं - 'वह शुद्ध है, बुद्ध और प्रबुद्ध है, प्रशान्त एवं परमाक्षर है, शिव तथा सुशिव है, ध्रुव एवं अक्षर है तथा शम्भुराट् है।'

विश्वोदितं निष्कलं निर्विकल्पं शुद्धं बृहन्तं परमं यद्विभाति।
अत्रान्तरे ब्रह्मविदोऽथ नित्यं पश्यन्ति तत्त्वमचलं यत्स ईशः॥
नित्यानन्दममृतं सत्यरूपं शुद्धं वदन्ति पुरुषं सर्ववेदाः।
तमोमिति प्रणवेनेशितारं धायायन्ति वेदार्थविनिश्चितार्थाः॥
(कूर्मपुराणे)

कूर्मपुराण (के उत्तरभाग) का वचन है - 'जिससे विश्व उदित होता है, अथवा जो विश्व के रूप में उदित होता है, कलाओं या विभाजनों से रहित है, जो किसी भी कल्पना से परे है, शुद्ध है, विस्तृत होकर परमपद में शोभित है, उसके मध्य सदैव ब्रह्मवेत्तागण जिस अचल तत्त्व को देखते हैं, वह ईश्वर है। जो सदैव आनन्दविग्रह, अमृतमय, सत्यरूप है, जिसे सभी वेद शुद्ध पुरुष कहते हैं, उस ईश्वर का प्रणव ॐकार के माध्यम से सभी वेदों के निश्चित अर्थ को जानने वाले मनीषीजन ध्यान करते हैं।'

पश्यन्ति भावितात्मानो यं ब्रह्मेत्यभिसंज्ञितम्।
शुद्धं यत्परमं धाम तद्विष्णोः परमं पदम्॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के पूर्वार्ध के तीसरे अध्याय) में कहते हैं - 'ज्ञान से भावित आत्मा वाले जिसे ब्रह्म, इस संज्ञा के साथ देखते हैं, जो शुद्ध और परमधाम है, वह विष्णु का परम पद है।'

अविकारमजं शुद्धं निर्गुणं यन्निरञ्जनम्।
नताः स्म तत्परं ब्रह्म विष्णोर्यत्परमं पदम्॥
(विष्णुपुराणे)

विष्णुपुराण (के प्रथम अंश के चौदहवें अध्याय) का कथन है - 'जो विकार एवं उत्पत्ति से रहित है, शुद्ध है, निर्गुण एवं निरंजन है, उस परब्रह्म के सामने हम विनत हैं, जो विष्णु का परम पद है।'

स ज्ञायते येन तदस्तदोषं शुद्धं परं निर्मलमेव रूपम् ॥
(नारदपुराणे)

नारदपुराण (के पूर्वार्ध के छियालीसवें अध्याय) में कहते हैं - 'वह जिसके द्वारा जाना जाता है, वह रूप दोषों को शमित करने वाला, शुद्ध एवं परम निर्मल है।'

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत ।
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ॥३०॥

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् ।
तत्तु सप्तधा गुप्तप्रकटभासितभ्रामकबोधकाज्ञसत्यञ्च ॥३१॥

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो सात प्रकार का है - गुप्त, प्रकट, भासित, भ्रामक, बोधक, अज्ञ एवं सत्य।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? इन्द्रियातीतत्वेन गुप्तः, शुद्धज्ञानेन प्रकटीकृतः, दिव्यलीलया भासितः, माययाष्टपाशैर्वा भ्रामकः, कृपया कर्मपाशमोचको भूत्वा बोधकः, जीवरूपेण ब्रह्मरूपं

विस्मृत्याज्ञोऽथवा अमिति ब्रह्म तद्बोधकोऽज्ञः, सत्येन सत्यः । सत्यं ब्रह्म परं लोक इति *ब्रह्मपुराणे* ।श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - वाङ्मनसागोचरत्वाद्गुप्तः, 'एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मा न प्रकाशते', इति श्रुतेः ।

ऐसा कैसे है ? इन्द्रियों से अतीत होने के कारण गुप्त है, शुद्ध ज्ञान से प्रकट हो जाता है, दिव्य अवतार एवं लीलाओं से भासित होता है, माया और अष्टपाश के द्वारा भ्रामक होता है, कृपापूर्वक कर्मपाश का मोचन कर देने से बोधक है, जीवरूप की स्थिति में ब्रह्मरूप को भूल जाने से अज्ञ है, अथवा 'अ' ब्रह्म है, उसका बोध कराने वाला अज्ञ है, सत्य होने से सत्य है। ब्रह्मपुराण में कहते हैं - 'परम लोक में ब्रह्म सत्य है ।' श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'वाणी और मन आदि इन्द्रियों के द्वारा ग्राह्य न होने से गुप्त है। 'सभी प्राणियों में स्थित होते हुए भी यह गूढ़ आत्मा प्रकाशित नहीं होता', ऐसा श्रुतिवाक्य है ।'

सत्यं ब्रह्मस्वरूपं हि तत्सत्यमभिधीमहि ।
(नारदपुराणे)
नित्यशुद्धं बुद्धियुक्तं सत्यं ब्रह्म नमाम्यहम् ।
चापि
अयमात्मा परं ब्रह्म सत्यं ज्ञानमनन्तकम् ।
(अग्निपुराणे)

नारदपुराण का वचन है - 'सत्य ब्रह्म का स्वरूप है, उस सत्य का हम ध्यान करते हैं ।' अग्निपुराण की उक्ति है - 'जो सदैव शुद्ध एवं बुद्धियुक्त

है, उस सत्य ब्रह्म को मैं प्रणाम करता हूँ। आगे और भी कहते हैं कि यह आत्मा परब्रह्म है, जो सत्य है, ज्ञानरूपी है एवं अन्त से रहित है।'

अत्र श्रुतिः
सर्वं सत्यं परं ब्रह्म न चान्यदिति या मतिः।
तच्च सत्यं वरं प्रोक्तं वेदान्तज्ञानपारगैः॥
अग्रे च
ऋतं सत्यं परं ब्रह्म सर्वसंसारभेषजम्॥
(जाबालदर्शनोपनिषत्)

जाबालदर्शनोपनिषत् का वचन है - 'सब कुछ सत्य परब्रह्म है, दूसरा नहीं, ऐसी जो मति है, उसे ही वेदान्तशास्त्र के विशेषज्ञों ने श्रेष्ठ सत्य कहा है। और भी आगे कहते हैं कि संसाररूपी रोग की औषधि केवल सत्य परब्रह्म ही है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - सत्यवचनधर्मरूपत्वात् सत्यः। 'तस्मात् सत्यं परमं वदन्ति' इति श्रुतेः, सत्यस्य सत्यमिति वा, 'प्राणा वै सत्यम्'। तेषामेष सत्यम्, इति श्रुतेः। चापि सत्सु साधुत्वात् सत्यः।

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - सत्यवाक्यरूपी धर्मविग्रह होने से सत्य है।' अतएव उसे परम सत्य कहते हैं', ऐसी श्रुति है।' सत्य का भी सत्य है, अथवा प्राण सत्य हैं, उनमें भी यह सत्य है', ऐसी श्रुति है। और भी कहते हैं कि साधुओं में साधुता का आधार होने से सत्य है।'

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||३२||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु
अष्टधान्धोग्रमोहोद्धतसङ्कीर्णविस्तृताप्रतिहतलोलुपञ्च ||३३||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो आठ प्रकार का है - अन्ध, उग्र, मोह, उद्धत, संकीर्ण, विस्तृत, अप्रतिहत एवं लोलुप।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? स्वरूपं गोपयित्वाप्रकाशं भवति जीवरूपेण ब्रह्मरूपं नेक्षतीत्यन्धः, संहारेणोग्रः, प्रपञ्चेन मोहः, मायाप्रतिरोधेनोद्धतः, सौक्ष्म्येन संकीर्णोऽनन्तबुद्ध्या विस्तृतः, त्रैगुण्यप्रहारेणाबाधितोऽप्रतिहतो जीवत्वे संसारभोगेन लोलुपो भवति। महान्धकाराय नम इति *योगिनीतन्त्रे*। श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - सूर्यादीनामपि भयहेतुत्वादुग्रः, 'भीषोदेति सूर्यः', इति श्रुतेः ।

तदीक्षणाय स्वाध्यायश्चक्षुर्योगस्तथापरम् ।
न मांसचक्षुषा द्रष्टुं ब्रह्मभूतः स शक्यते ॥
(नारदपुराणे)

किस प्रकार से ऐसा है ? अपने स्वरूप को छिपाने से अप्रकाशित होता है, उस समय जीवरूप से ब्रह्मरूप को न देखने से अन्ध है, संहार करने से उग्र एवं संसार का निर्माण करने से मोह है, माया का प्रतिरोध करने से उद्धत है, सूक्ष्मता से संकीर्ण एवं अनन्त होने से विस्तृत है, तीनों गुणों के प्रहार से बाधित न होने से अप्रतिहत है एवं जीवरूप से संसार का उपभोग करने के कारण लोलुप है।

महान् अन्धकार के लिए नमस्कार है, ऐसा योगिनीतन्त्र की उक्ति है। श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'प्रचण्ड सूर्यादि को भी भय प्रदान करने से उग्र है। 'इसके भय से सूर्य उदित होता है', ऐसा वेदवाक्य है।' नारदपुराण (के पूर्वार्द्ध के छियालीसवें अध्याय) में कहते हैं - 'उसे देखने के लिए एक आँख तो स्वाध्याय है और दूसरा योग है। वह ब्रह्मभूत मांस के नेत्रों से देखा नहीं जा सकता।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - सौक्ष्म्यातिशयशालित्वादणुः, 'एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्य', इति श्रुतेः। बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च ब्रह्म बृहत्, 'महतो महीयान्', इति श्रुतेः।

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'अत्यन्त सूक्ष्मता को धारण करने से अणु है। श्रुतिवाक्य है कि 'यह अणु आत्मा चेतना के द्वारा जानने योग्य है।' विस्तार करने और विस्तृत होने से ब्रह्म बृहत् है, महान् से भी अधिक महान् है, ऐसी श्रुति है।' (अतएव संकीर्ण एवं विस्तृत है)

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||३४||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु नवधा कर्त्रकर्तृविकर्तृ च
पालकापालकविपालकञ्च हर्त्रहर्तृविहर्तृ च ||३५||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो नौ प्रकार का है - कर्ता, अकर्ता, विकर्ता, पालक, अपालक, विपालक, हर्ता, अहर्ता एवं विहर्ता।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? चेतनो मायायुक्तः कर्म करोति तस्मात्कर्ता, मायया परञ्च गुणैर्वा कारयतीत्यकर्ता विसर्गङ्कर्म करोति तस्माद्विकर्ता। लोकान्पालयति पालकः, कर्मानुसारं जीवान्कर्षतीत्यपालकः, विज्ञानेन पालयति तस्माद्विपालकः, संहरतीति हर्ता, करुणयोद्धरत्यहर्ता, भौवादिकान्विकारान्संहृत्य तत्त्वरक्षणं करोतीति वैचित्र्येन विहर्ता भवति।

किस प्रकार से ऐसा है ? चेतन माया से युक्त होकर कर्म करता है, अतएव कर्ता है, माया अथवा गुणों से करवाता है, (स्वयं नहीं करता है), अतएव  अकर्ता है, विसर्ग (साम्य संहार) कर्म करने से विकर्ता है।

लोकों का पालन करने से पालक है, कर्मानुसार जीवों का कर्षण करने से अपालक है, विशिष्ट ज्ञान (विज्ञान) के द्वारा पालन करने से विपालक है। संहार करने से हर्ता है, करुणा से उद्धार करने के कारण अहर्ता है, सांसारिक विकारों का हरण करके तत्त्व की रक्षा करने से, इस विचित्रता के कारण विहर्ता होता है।

शिवाय सत्यविज्ञानमहानन्दस्वरूपिणे।
स्वविलक्षणहीनाय स्वसंवेद्याय ते नमः॥
स्वात्मभूतमहामायाशक्तिवैभवसाक्षिणे।
स्रष्ट्रे भर्त्रे च संहर्त्रे सर्वस्य जगतः सदा॥
(पराशरोपपुराणे)

पराशर उपपुराण में वर्णन है - 'शिव (कल्याण करने वाले के लिए), सत्यस्वरूपी, विज्ञानस्वरूपी, महान् आनन्दस्वरूपी, स्वयं ही (ब्रह्मरूप से) विलक्षण एवं (जीवरूप से) उसी विलक्षणता से रहित, स्वयं से ही स्वयं को बोधित करने वाले के ब्रह्म के लिए नमस्कार है। अपने से ही जन्य महामाया की शक्ति और वैभव (से प्रतिफलित संसारादि) के साक्षी, सृष्टि की रचना करने वाले, उसका भरण-पोषण करने वाले और सम्पूर्ण जगत् का संहार करने वाले (ब्रह्म) के लिए सदैव नमस्कार है।'

नारायणः परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परम्।
(शेषसंहितायाम्)

निष्कलो निष्क्रियश्चापि सर्वगः सर्वदृक्सदा।
(अजितागमे)

शेषसंहिता का वचन है - 'नारायण परब्रह्म हैं और नारायण ही परमतत्त्व हैं।' 'वह ब्रह्म निष्कल और निष्क्रिय होते हुए भी सदैव सर्वत्र गतिशील एवं सर्वद्रष्टा है', ऐसा अजितागम का कथन है।

मायागुणैर्युता मेंऽशाः कुर्वन्ति सृजनादिकम्।
न करोमि स्वयं किञ्चित् सृष्ट्यादिकमहं शिव॥
('गौडीय'सनत्कुमारसंहितायाम्)

भगवान् शिव को भगवान् श्रीकृष्ण ने (गौडीय) सनत्कुमार-संहिता में कहा है - 'हे शिव ! मायाजनित गुणों से युक्त मेरे (अवतारादि) अंश सृजन आदि का कार्य करते हैं। मैं स्वयं सृष्टि आदि कोई कार्य नहीं करता हूँ।'

कर्ता चैव विकर्ता च संहर्ता वै प्रजापतिः।
नारायणः परं सत्यं नारायणः परं पदम्॥
(मत्स्यपुराणे)

मत्स्यपुराण का वचन है - 'कर्ता, विकर्ता और संहर्ता, तथा प्रजाओं के स्वामी नारायण परम सत्य हैं, वही परम पद हैं।'

प्रत्यक्षसिद्धा रचना कर्तारं समपेक्षते।
अतोऽद्य कर्मकर्तृत्वाद्ब्रह्मणः कर्मितोचिता॥
(सूर्यगीतायाम्)

सूर्यगीता का कथन है - 'जो रचना (जगत्) प्रत्यक्षरूप से सिद्ध है, वह किसी कर्ता की अपेक्षा रखती है। अतएव कर्म (संसार) का कर्ता होने से ब्रह्म के कर्ताभाव की सार्थकता सिद्ध होती है।'

आदिकर्ता च भूतानां संहर्ता परिपालकः।
तस्मान्महेश्वरो देवो ब्रह्मणोऽधिपतिः स्मृतः॥
(लिङ्गपुराणे)

लिङ्गपुराण की उक्ति है - 'प्राणियों का सर्वप्रथम कर्ता है, उनका पालक और संहर्ता है, इसीलिए वह महान् ईश्वरदेव (अनन्तवाच्य) ब्रह्म का अधिपति बताया गया है।'

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति -
क्रियत इति कर्म जगत्तस्य कर्ता 'यो वै बालाक एतेषां पुरुषाणां कर्ता यस्य वै तत्कर्म स वेदितव्यः' इति श्रुतेः। चापि कर्ता स्वतन्त्रः। विचित्रं भुवनं क्रियते, इति विकर्ता।

श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'जो किया जाये, वह कर्म है। यह संसार कर्म है, ब्रह्म उसका कर्ता है।' श्रुतिवाक्य है -'हे बालाके ! जो इन सभी (क्षर एवं अक्षर संज्ञक) पुरुषों का कर्ता है, जिसका यह कर्म है, वह जानने योग्य है।' और भी कहते हैं कि स्वतन्त्र होने से कर्ता है। विचित्र संसार का निर्माण करता है, अतएव विकर्ता है।'

त्वं कर्ता च विकर्ता च संहर्ता प्रभवोऽव्ययः।
(ब्रह्मपुराणे)
त्वं हि कर्ता विकर्ता च त्वं क्षरश्चाक्षरश्च हि।
अनादिनिधनो ह्याद्यस्त्वमेकः पुरुषोत्तम॥
(महाभारते शान्तिपर्वणि)

ब्रह्मपुराण में स्तुति है - 'तुम कर्ता हो, विकर्ता और संहर्ता हो, सबों के आदि स्थान एवं अविनाशी हो।' महाभारत के शान्तिपर्व में कहते हैं - 'तुम ही कर्ता और विकर्ता हो, तुम ही क्षर एवं अक्षरसंज्ञक पुरुष हो। आदि एवं निधन से, प्राचीन, दोनों पुरुषों से उत्तम एक तुम ही हो।'

चापि राज्ञे सुव्रताय शिवावतारो भगवान् कालहस्तीन्द्र उपदिशति

अजायता जगत्सर्वं सृष्ट्यादौ विश्वकर्मणः।
स एव कर्ता विश्वस्य विश्वकर्मा जगत्पतिः॥
प्रथमस्तु निराकारमोङ्कारस्तदनन्तरम्।
चिदानन्दः परं ज्योतिः ब्रह्मानन्दस्तु पञ्चमः॥
यस्मिन्भूत्वा पुनर्यस्मिन्प्रलीयन्ते भवन्ति च।
ज्योतिषां परमं स्थानं तत्परं ज्योतिरिष्यते॥
पुष्पमध्ये यथा गन्धो पृथ्वीमध्ये यथा जलम्।
शङ्खमध्ये यथा नादो वृक्षमध्ये यथा रसः॥
तथा सर्वशरीरेषु अण्ववण्वन्तरेष्वपि।
स्थित्वा भ्रमयतीदं हि तत्परंब्रह्म उच्यते॥
(महाविश्वकर्मपुराणे)

महाविश्वकर्मपुराण में राजा सुव्रत के लिए शिवावतार भगवान् कालहस्तीन्द्र उपदेश करते हैं - 'भगवान् विश्वकर्मा द्वारा ही इस संसार की सृष्टि की गयी है, अतएव समस्त विश्व के वे प्रभु ही कर्ता एवं स्वामी हैं। उनके पांच स्वरूप हैं, जिनमें प्रथम भेद निराकार है,

तदनन्तर ॐकार है, तीसरा चिदानन्द, चौथा परमज्योति और पांचवां भेद ब्रह्मानन्द के नाम से कहा गया है। यह सारा संसार जिनसे जन्म लेकर फिर जिनमें लीन हो रहा है और यह चक्र निरन्तर चल रहा है, उन ज्योतियों की परम ज्योति भी विश्वकर्मा ही हैं। जैसे पुष्प के अन्दर गन्ध, पृथ्वी में जल, शंख में ध्वनि तथा वृक्षों में रस विद्यमान् होता है, वैसे ही सभी शरीरों एवं अणु-परमाणु में स्थित रहकर उनको इस संसार में घुमाने वाले परब्रह्म विश्वकर्मा ही हैं।'

अत्र श्रुतिः
नारायणो धाता विधाता कर्ता विकर्ता
दिव्यो देव एको नारायणः ॥
(सुबालोपनिषत्)

सुबालोपनिषत् की उक्ति है - 'नारायण इस संसार के पालक हैं, विधान बनाने वाले हैं, कर्ता हैं, विकर्ता हैं, ऐसे दिव्य देव एक नारायण ही हैं।'

त्वं हि कर्ता विकर्ता च भूतानामिह सर्वशः ।
आराधयित्वा त्वां देवाः सुखमेधन्ति नित्यशः ॥
(महाभारते)

महाभारत (के वनपर्व) में कहते हैं - 'यहाँ सभी प्राणियों के तुम ही कर्ता और विकर्ता हो, तुम्हारी आराधना करके देवगण सदैव सुख का उपभोग करते हैं।'

सृष्टिस्थितिविनाशानां कर्ता कर्तृपतिर्भवान् ॥
(ब्रह्मपुराणे)

अकर्ता गुणस्पष्ट एवाद्य देवो निरीहोऽनुपाधिः सदैवाकलश्च ।
चाग्र उक्तम्

सगुणा निर्गुणा चैव कार्यभेदे सदैव हि ।
अकर्ता पुरुषः पूर्णो निरीहः परमोऽव्ययः ॥
करोत्येषा महामाया विश्वं सदसदात्मकम् ॥
(श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणे)

ब्रह्मपुराण में कहते हैं - 'सृष्टि, स्थिति और विनाश के कर्ता और अन्य कर्ताओं के स्वामी आप ही हैं।' श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण (के तीसरे स्कन्ध के पांचवें अध्याय) में कहते हैं - 'आदिदेव ब्रह्म अकर्ता है, गुणों के माध्यम से व्यक्त होता है, निरीह है, उपाधि और कलाओं से सदा रहित है। आगे (तीसरे स्कन्ध के नवें अध्याय में) कहते हैं कि सगुणा और निर्गुणा, वह सदैव कार्यभेद से होती है। पुरुष तो अकर्ता है, पूर्ण, निरीह. परम एवं अविनाशी है। महामाया ही इस सत् एवं असत् संज्ञक विश्व की रचना करती है।'

अकर्ता चैव कर्ता च कार्यं कारणमेव च ।
यथेच्छति तथा राजन्क्रीडते पुरुषोऽव्ययः ॥
(महाभारते शान्तिपर्वणि)

अकर्ता सर्वकार्याणां योगनिद्रावशीकृतः ।
(परमेश्वरसंहितायाम्)

महाभारत के शान्तिपर्व की उक्ति है - 'हे राजन् ! वह अविनाशी पुरुष कभी अकर्ता, कभी कर्ता, कभी कार्य तो कभी कारण बनता हुआ, जिस प्रकार से इच्छा करे, उस प्रकार से क्रीडा करता है।'
परमेश्वरसंहिता का कथन है - 'योगनिद्रा के वश में ब्रह्म सभी कार्यों की ओर से अकर्ता बना रहता है।'

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान्।
अकर्ता लेपको नित्यो मध्यस्थः सर्वकर्मणाम्॥
(महाभारते)

महाभारत (के अनुशासनपर्व) का कथन है - 'प्रकृति में स्थित होकर पुरुष प्रकृति से उत्पन्न सत्वादि गुणों का उपभोग करता है। सभी कर्मों के मध्य में स्थित होता हुआ वह नित्य उनका लेपक बनता हुआ भी अकर्ता रहता है।'

संशुद्धो विमलो भोक्ता अकर्ता साक्षिवत् स्थितः।
विदित्वा न विशन्त्येनं भूयः संसारपञ्जरम्॥
(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के अम्बिकाखण्ड) का वचन है - 'यह चेतन सम्यक् रूप से शुद्ध और निर्मल है, उपभोग करता हुआ भी अकर्ता होने से साक्षी के समान स्थित होता है और ब्रह्मबोध के अनन्तर इस संसारजाल में पुनः प्रवेश नहीं करता।'

तदा हर्ता च कर्ता च भोक्ता च प्रकृतेर्वशी।
(शिवधर्मोत्तरपुराणे)

अकर्ता निर्गुणश्चाहं चिन्मात्रः पुरुषः स्मृतः ॥
मानसं वाचिकं चैव शारीरं कर्म यत्कृतम् ।
प्रकृत्या कारितं मन्ये अकर्ता पुरुषः स्मृतः ॥
(स्वच्छन्दतन्त्रे)

शिवधर्मोत्तरपुराण का वचन है - 'प्रकृति को वश में करने वाला वह चेतन उस समय संहार करने वाला हर्ता, निर्माण करने वाला कर्ता एवं उपभोग करने वाला भोक्ता बन जाता है।' स्वच्छन्दतन्त्र में कहते हैं - 'मैं अकर्ता एवं निर्गुण हूँ, चिन्मात्र पुरुष बताया गया हूँ। मानसिक, वाचिक अथवा शारीरिक, जो भी कर्म किया जाता है, वह प्रकृति के द्वारा किया गया है, पुरुष को अकर्ता बताया गया है।'

स्रष्टा भोक्तासि कूटस्थो गुणानां प्रभुरीश्वरः ।
अकर्ता हेतुरहितः प्रभुः स्वात्मन्यवस्थितः ॥
(विष्णुधर्म-पूर्व-पुराणे)

विष्णुधर्म *पूर्व* पुराण में उक्ति है - 'तुम संसार को बनाने वाले हो, उपभोग करने वाले हो, निश्चल रहते हो, गुणों के स्वामी और ईश्वर हो। अकर्ता हो, कारण से रहित, शासन करने वाले और अपने आप में ही स्थित रहते हो।'

व्याध्याधिदारिद्र्यभयार्तिहर्ता स्वगुप्तयेऽनेकशरीरधर्ता ।
स्वदासभर्ता बहुधा विहर्ता कर्ताप्यकर्ता स्ववशोऽरिहर्ता ॥
(श्रीदत्तभावसुधारसस्तोत्रे)

श्रीदत्तभावसुधारसस्तोत्र में कहते हैं - 'आधि-व्याधि रोगादि दारिद्य, भय-संकट का हरण करने वाले हो, अपना वास्तविक तत्त्वरूप छिपाने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार से अवतार एवं देह धारण करते हो, अपने सेवकों का भरण एवं पोषण करते हो, अनेकों प्रकार से संसार (अथवा विकारों) का हरण करते हो, संसार की रचना करते हुए भी, कर्ता होने पर भी अकर्ता हो, अपने सेवक एवं अनुयायियों के (आभ्यन्तर) शत्रुओं का नाश करते हो।'

अत्र श्रुतिः

शर्वः सर्वस्य जगतो विधाता धर्ता हर्ता विश्वरूपत्वमेति॥

(त्रिपुरोपनिषत्)

त्रिपुरोपनिषत् की श्रुति है - 'भगवान् शर्व (शिव) इस सम्पूर्ण संसार के विधाता हैं, धारण करने एवं हरण करने वाले है, इस प्रकार वे विश्वरूप हैं।'

त्वं कर्ता सर्वभूतानां पाता हर्ता त्वमेव च।
त्वमेव जगतां पूज्यस्त्वमेव जगदीश्वरः॥

(स्कन्दपुराणे)

स्रष्टा च पालको हर्ता स एव जगतां प्रभुः॥

(स्कन्दपुराणे)

अजस्त्वममरो देवः स्रष्टा हर्ता विभुः परः।
प्रधानपुरुषस्तत्त्वं ब्रह्म ध्येयं तदक्षरम्॥

(स्कन्दपुराणे)

स्कन्दपुराण (के काशीखण्ड) की उक्ति है - 'तुम ही सभी प्राणियों के कर्ता हो, रक्षक हो और तुम ही हर्ता भी हो। तुम ही संसार में पूज्य हो और जगत् के स्वामी भी हो।' स्कन्दपुराण (के ब्रह्मखण्ड/सेतुखण्ड) में कहते हैं - 'वह संसार का स्वामी ही सृजन करने वाला, पालन करने वाला एवं संहार करने वाला है।' स्कन्दपुराण (के अम्बिकाखण्ड) का कथन है - 'हे देव ! आप अजन्मा है, अमर हैं, संसार की रचना एवं संहार करने वाले परम स्वामी हैं। प्रधान पुरुष तत्त्व हैं और ध्यान किये जाने वाले अविनाशी ब्रह्म हैं।'

स एव शङ्करः साक्षात्सर्वानुग्रहकारकः।
कर्ता भर्ता च हर्ता च साक्षी निर्गुण एव सः॥
(शिवपुराणे)

त्वमेव देवाखिललोककर्ता पाता च हर्ता परमेश्वरोऽसि॥
(शिवपुराणे)

अहमेवादिकर्तास्य हर्ता च परिपालकः॥
(शिवपुराणे)

कर्ता हर्ता च भर्ता च त्वमेवान्यो न शङ्कर॥
(शिवपुराणे)

कर्ता हर्ता च भर्ता च न मयास्ति समो विभुः।
अहमेव परं ब्रह्म परं तत्त्वं पितामह॥
(शिवपुराणे)

शिवः सर्वस्वकर्ता हि भर्ता हर्ता परात्परः।
परब्रह्म परेशश्च निर्गुणो नित्य एव च॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण (की कोटिरुद्रसंहिता) में कहते हैं - 'वह ब्रह्म ही कल्याण करने वाला, सबों पर साक्षात् अनुग्रह करने वाला, संसार का कर्ता, भर्ता और हर्ता है, सभी क्रियाओं का साक्षी है और निर्गुण भी वही है।' शिवपुराण (की वायवीयसंहिता के पूर्वभाग) में कहते हैं - 'हे देव ! तुम ही सम्पूर्ण लोकों के कर्ता, रक्षक एवं संहार करने वाले परमेश्वर हो।' शिवपुराण (की वायवीय-संहिता के उत्तरभाग) में कहते हैं - 'मैं ही सबों का आदिकर्ता, संहारक एवं पालन करने वाला हूँ।'

शिवपुराण (की शतरुद्रसंहिता) में वर्णन है - 'हे कल्याणकारी शंकर ! आपके अतिरिक्त कोई दूसरा कर्ता, हर्ता एवं भर्ता नहीं है।' शिवपुराण (की रुद्रसंहिता के सृष्टिखण्ड) में कहते हैं - 'हे पितामह ! मैं ही परब्रह्म एवं परमतत्त्व हूँ। मैं ही कर्ता, हर्ता एवं भर्ता हूँ। मेरे समान दूसरा कोई इस संसार का स्वामी नहीं है।' शिवपुराण (की रुद्रसंहिता के सतीखण्ड) में कहते हैं - 'परात्पर शिव ही सबों का अपने बल से कर्ता, भर्ता एवं हर्ता होते हैं। वे निर्गुण परब्रह्म परमेश्वर ही सदैव बने रहने वाले हैं।'

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
मया ज्ञातं तु तद्ब्रह्मपदं नित्यं निरामयम् ||३६||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि मेरे द्वारा सभी द्वंद्वों से परे वह नित्य ब्रह्मपद जान लिया गया।

पुनः साब्रवीत् - नैतत् | तत्तु दशधा शब्दतेज उदारानुदारनेतृजेतृसङ्क्रामकातिक्रामककुलतपश्च ||३७||

पुनः उस (अशरीरिणी वाग्देवी) ने कहा - 'ऐसा नहीं है। वह ब्रह्म तो दस प्रकार का है - शब्द, तेज, उदार, अनुदार, नेता, जेता, संक्रामक, अतिक्रामक, कुल एवं तप।'

सूत्रविस्तारभाष्यम्

कथमेतत् ? स्पन्देन शब्दो ज्योतिषा तेजो मोक्षदानादुदारः प्रारब्धदानेनानुदारो लोकनिर्वहणेन नेता वैषम्यविजयेन जेता प्रभावत्वेन सङ्क्रामकोऽपराजितत्वेनातिक्रामकः सर्वोपत्तिकारणकारणेन कुलं क्लेशसन्तापनेन तपो भवति। श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - महती द्युतिर्बाह्याभ्यन्तरा चास्येति महाद्युतिः। स्वयंज्योतिर्ज्योतिषाञ्ज्योतिरित्यादि श्रुतेः। ओजः प्राणबलम्, तेजः शौर्यादयो गुणाः, द्युतिर्दीप्तिस्ता धारयतीति ओजस्तेजोद्युतिधरः।

किस प्रकार से ऐसा है ? स्पन्दित होने से शब्द है, प्रकाशित होने से तेज है, मोक्ष देने से उदार एवं प्रारब्ध देने से अनुदार है, संसार का निर्वहन करने से नेता एवं विषमता को जीतने से जेता है, अपने प्रभाव के कारण संक्रामक है तथा अपराजित रहने से अतिक्रामक है, सबों की उत्पत्ति का कारण होने के कारण कुल है तथा क्लेश को ही सन्ताप देने के कारण तप है। श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - इसके अन्दर

और बाहर बहुत बड़ी ज्योति है, प्रकाश है, इसीलिए महाद्युति है।' स्वयं ज्योतिःस्वरूप है, प्रकाशित तत्वों के भी प्रकाश का आधारस्रोत है, ऐसा वेदवाक्य है। प्राणबल को ओज कहते हैं, शौर्य आदि गुणों को तेज कहते हैं, दीप्ति को द्युति कहते हैं, इन सबों को धारण करता है, अतएव ओजस्तेजोद्युतिधर कहलाता है (तेजोरूप है)।'

शब्दब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं महत्।
(लक्ष्मीतन्त्रे)
द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परञ्च यत्।
(अमरौघशासने, महाभारते, अग्निपुराणे, ब्रह्मपुराणे,
विष्णुधर्मोत्तरपुराणे, नारदपुराणे)
परब्रह्म नमस्तेऽस्तु शब्दब्रह्म नमोऽस्तु ते।
(वामनपुराणे)
अन्यत्सर्वं परित्यज्य शब्दब्रह्म सदाभ्यसेत् ॥
स्वसंवेद्यमसंवेद्यं शब्दब्रह्म द्विधा स्थितम् ॥
(अमरौघशासने)

लक्ष्मीतन्त्र का वचन है - 'शब्दब्रह्म परमधाम है, परम पवित्र और महान् है।' अमरौघशासन, महाभारत, अग्निपुराण, ब्रह्मपुराण, विष्णुधर्मोत्तरपुराण एवं नारदपुराण का कथन है - दो प्रकार के ब्रह्म को जानना चाहिए, शब्दब्रह्म एवं परब्रह्म।' वामनपुराण में संस्तुति है - 'परब्रह्म के लिए प्रणाम है एवं शब्दब्रह्म के लिए प्रणाम है।' अमरौघशासन का निर्देश है - 'बाकी सबों को छोडकर सदैव शब्दब्रह्म का अभ्यास करना चाहिए। शब्दब्रह्म दो प्रकार का होता है, स्वसंवेद्य

(जिसका बोध स्वयं इस देह से हो जाये, जैसे कि उच्चरित प्रणव आदि) और दूसरा असंवेद्य (जिसका बोध इस देह से न हो सके, जैसे स्पन्दित प्रणव आदि)।'

अत्र श्रुतिः

द्वे विद्ये वेदितव्ये तु शब्दब्रह्म परञ्च यत्।
शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥
(ब्रह्मबिन्दूपनिषत्)

द्वे ब्रह्मणी हि मन्तव्ये शब्दब्रह्म परञ्च यत्।
शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति॥
(त्रिपुरातापिन्युपनिषत्)

द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परञ्च यत्।
शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति॥
(मैत्रायण्युपनिषत्)

ब्रह्मबिन्दूपनिषत् की श्रुति है - 'दो विद्या/ब्रह्म को जानना चाहिए, जो शब्दब्रह्म है और जो परब्रह्म है। शब्दब्रह्म में दक्ष होने पर ही परब्रह्म की ओर जाता है।' ऐसा ही कथन त्रिपुरातापिन्युपनिषत् एवं मैत्रायण्युपनिषत् का भी है।

मोहिताः कालपाशेन मृत्युपाशवशंगताः।
शब्दब्रह्म न जानन्ति पापिनस्ते कुबुद्धयः॥
(शिवपुराणे)

शिवपुराण (की उमासंहिता) का कथन है कि जो जन कालपाश से

मोहित हैं, मृत्यु के पाश के वश में चले गए हैं, वे कुबुद्धि वाले पापी शब्दब्रह्म को नहीं जानते हैं।

शब्दब्रह्म परं ब्रह्म ममोभे शाश्वती तनू॥
(श्रीमद्भागवतमहापुराणे)
शब्दब्रह्म सुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयम्।
अनन्तपारं गम्भीरं दुर्विगाह्यं समुद्रवत्॥
(श्रीमद्भागवतमहापुराणे)

श्रीमद्भागवत महापुराण (के छठे स्कन्ध) में कहते हैं - 'शब्दब्रह्म एवं परब्रह्म, ये दोनों मेरे अविनाशी शरीर हैं।' श्रीमद्भागवत महापुराण (के एकादश स्कन्ध) का कथन है - 'शब्दब्रह्म का बोध होना अत्यन्त कठिन है, यह प्राण-इन्द्रिय और मन से युक्त है, इसका पार अथवा अन्त नहीं है, यह समुद्रवत् गम्भीर है, इसे पकड़ना कठिन है।'

शब्दब्रह्म परंब्रह्म नानयोर्भेद इष्यते।
लये तु एकमेवेदं सृष्टौ भेदः प्रवर्त्तते॥
(स्कन्दपुराणे)
शब्दब्रह्म स्पर्शमयं रूपब्रह्म रसात्मकम्।
गन्धब्रह्म परं ज्ञेयं तस्मै तद्ब्रह्मणे नमः॥
(भविष्यपुराणे)
प्रकृतिः पुरुषः साक्षात्स्रष्टा हर्ता जगद्गुरो।
त्राता नेता जगत्यस्मिन्द्विजानां द्विजवत्सल॥
(लिङ्गपुराणे)

स्कन्दपुराण (के वैष्णवखण्ड) का कथन है - 'शब्दब्रह्म एवं परब्रह्म में कोई भेद प्राप्त नहीं होता है, प्रलय के बाद ये दोनों एक ही हैं, सृष्टि के समय मात्र यह भेद प्रवर्तित होता है।' भविष्यपुराण (के प्रतिसर्गपर्व, चतुर्थ खण्ड) में कहते हैं - 'शब्दब्रह्म स्पर्शमय है, रूपब्रह्म रसात्मक है, उससे परे गन्धब्रह्म है, इस प्रकार से उस ब्रह्म के लिए नमस्कार है।' लिङ्गपुराण (के पूर्वभाग) का कथन है - 'हे द्विजवत्सल, संसार के गुरु ! आप साक्षात् प्रकृति एवं पुरुष हैं। आप इसके निर्माता एवं संहार करने वाले हैं। आप इस संसार में द्विजों की रक्षा एवं नेतृत्व करने वाले हैं।'

हरिरूपी महादेवः शिवरूपी जनार्दनः ।
इति लोकस्य नेता यस्तं नमामि जगद्गुरुम् ॥
(नारदपुराणे)

श्रीमदाचार्यशङ्करोऽनुकम्पयति - जगद्यन्त्रनिर्वाहको नेता। यतो जयत्यतिशेते सर्वभूतानि स्वभावतोऽतो जेता।

नारदपुराण का कथन है - '(शिव) महादेव हरिरूप (विष्णु) हैं एवं जनार्दन (विष्णु) शिवरूप हैं। इस प्रकार से संसार के जो नेता हैं, उन जगद्गुरु को मैं प्रणाम करता हूँ।' श्रीशङ्कराचार्य अनुग्रह करते हैं - 'संसाररूपी यन्त्र का निर्वहन करने के कारण नेता है।चूंकि सभी प्राणियों को जीतता है और उनसे श्रेष्ठ होता है किन्तु ऐसा करने में उसे कोई परिश्रम नहीं करना पड़ता, अपितु ऐसा स्वभावतः होता है, अतएव जेता है।'

कारणं सर्वकार्याणां नेता कालक्रियादिषु ।
सर्वाद्यः पुरुषः स्वैरमित्यनुत्थित उत्थितः ॥
(योगवाशिष्ठमहारामायणे)

योगवाशिष्ठ महारामायण (में निर्वाणप्रकरण के उत्तरार्ध) का कथन है - 'सभी कार्यों का कारण, काल एवं क्रिया आदि का नेता, सबों का आदि यह पुरुष अपने आप से ही निजेच्छा से न उठता हुआ (कूटस्थ स्थिति में) भी उठता (जगद्रूप से व्यक्त होता) है।'

प्रसन्नवदनो जेता।
(श्रीरामतापिन्युपनिषत्)
यशस्वी धार्मिको जेता।
(गणेशपुराणे)
श्रोता घ्राता रसयिता नेता कर्ता विज्ञानात्मा पुरुषः ॥
(आत्मोपनिषत्)

श्रीरामतापिन्युपनिषत् का वचन है - 'आप प्रसन्नमुख वाले विजयी जेता हैं।' गणेशपुराण की उक्ति है - 'यशसम्पन्न धर्मयुक्त विजयी जेता हैं।' इसी प्रकार आत्मोपनिषत् का वचन है - 'सुनने वाला, सूंघने वाला, रस को ग्रहण करने वाला, निर्वहन करने वाला नेता और कर्ता, विज्ञान वाला यह पुरुष चेतन है।'

निग्रहो निग्रहाणाञ्च नेता त्वं सुरनन्दनः ॥
प्रग्रहः परमानन्दः क्रोधघ्नस्तार उच्छ्रितः ॥
(स्कन्दपुराणे)

तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म भर्गस्तेजो यतः स्मृतम्।
(अग्निपुराणे)

स्कन्दपुराण (के माहेश्वर/कौमारिकाखण्ड) की उक्ति है - 'निग्रह (नियन्त्रण) करने वालों के ऊपर भी आप निग्रह करते हैं, आप देवपुत्र और नेता हैं। विशिष्ट प्रकाश से युक्त हैं, परम आनन्दरूप हैं, क्रोधादि रिपुओं का संहार करने वाले हैं, इन्द्रियों से अतीत और दुर्जेय हैं।' अग्निपुराण में कहते हैं - 'वह ज्योति परब्रह्म है, जिसका देदीप्यमान् मण्डल तेज बताया गया है।'

य एवं वेद स तत्त्वविद्भवति स वेदविद्भवति स ब्रह्मविद्भवति | स मोक्षाधिकारी भवति स शिवो भवति स विष्णुर्भवति स ब्रह्मैव भवति | अहमस्मि ब्रह्मविद्या ब्रह्म च मायापि बन्धनमोक्षौ सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्ति सनातनमित्युपनिषत् ||३८||

जो ऐसा (उपर्युक्त सूत्रों के भाव को) जानता है, वह तत्त्व को जानने वाला बनता है, वह वेद को जानने वाला बनता है, वह ब्रह्म को जानने वाला बनता है। वह मोक्ष का अधिकारी होता है, वह शिव होता है, वह विष्णु होता है, वह ब्रह्म ही हो जाता है। मैं ब्रह्मविद्या हूँ, मैं ब्रह्म और माया भी हूँ, मैं बन्धन एवं मोक्ष हूँ। जो कुछ भी है, वह सब कुछ मैं ही हूँ, मेरे अतिरिक्त कुछ भी नहीं, मेरे अतिरिक्त कुछ भी नित्य नहीं, यह इस प्रकार से वेदान्तशास्त्र है।

इत्थं श्रुत्वा वचो देव्या निग्रहः प्रत्यभाषत |
धन्यासि त्वं महादेवि ! धन्योऽहञ्च पुनः पुनः ||३९||

देवी के इस प्रकार वचनों को सुनकर निग्रहाचार्य ने उत्तर में कहा कि हे महादेवि ! आप धन्य हैं और मैं भी धन्य हूँ, बारम्बार धन्य हूँ।

यत्पादपद्मान्तरसन्निविष्टा
इन्द्रादयो राज्यमवाप्तवन्तः ।
सुपर्णगो वाक्पतिरीश्वरश्च
कामेश्वरीं तां हृदि चिन्तयामि ॥४० ॥

जिसके चरणकमलों के अन्तर्गत आश्रय ग्रहण करने वाले इन्द्र आदि ने अपना अपना राज्य प्राप्त किया, सुपर्णग (विष्णु)-वाक्पति (ब्रह्मा) -ईश्वर (रुद्र) को भी उनका पद मिला, उस कामेश्वरी का मैं हृदय में चिन्तन करता हूँ।

ज्ञानवतीटीका - उत्तरपीठिका

गरुडसञ्चारहेतुना सुपर्णगो विष्णुरेव स्मृतः ।
वाक्पतिर्ब्रह्मा ईश्वरश्च स रुद्रो गिरिजापतिः ।
कथं देवीप्रेरणया त्रिदेवा भुवनं दधीरन् ?

*तत्र ब्रह्मोपदेशः -*

यद्गुणस्त्वमहो धातः सर्वशास्त्रार्थविद्यतः ।
अनुसन्धानवेत्तासि सृजकस्त्वं सदा भव ॥

*ततो विष्णूपदेशः*

वेदज्ञोऽसि महाविष्णो मद्भक्तोऽसि गुणालयः।
धर्मज्ञोऽसि च लोकं (लोके) त्वं भव सृष्टेर्विवर्द्धकः॥

*ततः शिवोपदेशः*

आगमज्ञो महाप्राज्ञो निर्मायोऽसि सदाशिव।
सगुणस्त्वं महायोगी सृष्टिसंहारको भव॥
(योगिनीतन्त्रे)

*ततः शक्रानुग्रहः*

सहस्राक्षोऽपतद्भूमौ प्रणमद्दण्डवत्तदा।
उत्थाय वेदवेदाङ्गकथितैः स्तोत्रकैरपि॥
तुष्टाव तां जगद्वन्द्यां महाकालीं सुरोत्तमः।
ततः पुनर्मुनिश्रेष्ठ प्रणिपत्य महेश्वरीम्।
स्वं स्वं स्थानमुपाजग्मुर्ब्रह्माद्यास्त्रिदशेश्वराः॥
(महाभागवते)

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यत इति शक्रादिस्तुतिः।

गरुड पर विचरण करने के कारण विष्णु ही सुपर्णग कहे गये हैं। ब्रह्मा वाक्पति हैं और ईश्वर गिरिजापति रुद्र हैं। किस प्रकार से देवी की प्रेरणा से त्रिदेवों ने इस संसार को धारण किया ? वहाँ ब्रह्मा के प्रति उपदेश कहते हैं - 'हे धाता ! तुम सभी शास्त्रों के अर्थ को जानने वाले हो, अनुसन्धान को जानते हो, तुम जिस गुण से युक्त हो उसके आधार पर सदैव सृष्टिकर्ता रहो।' अब इसके बाद विष्णु के प्रति उपदेश कहते हैं - 'हे महाविष्णु ! तुम वेद को जानते हो, सद्गुणों की खान और मेरे

भक्त हो। तुम धर्म को जानते हो इसीलिये सृष्टि के वृद्धिकर्ता बनो।' अब इसके बाद शिव के प्रति उपदेश कहते हैं - 'हे सदाशिव ! तुम आगम को जानते हो, विशाल प्रज्ञा से युक्त किन्तु माया से रहित हो। तुम महायोगी और गुणों से युक्त हो अतः सृष्टि के संहारक बनो।' यह सब वचन योगिनीतन्त्र के हैं। अब महाभागवत उपपुराण के अनुसार इन्द्र के प्रति कृपा का वर्णन करते हैं - 'सहस्र नेत्रों वाले इन्द्र ने भूमि पर गिर कर दण्डवत् प्रणाम किया। फिर देवताओं में श्रेष्ठ इन्द्र ने उठकर वेद एवं वेदांग में वर्णित स्तोत्रों के द्वारा सम्पूर्ण संसार के द्वारा वन्दित महाकाली को सन्तुष्ट किया। हे मुनिश्रेष्ठ नारद ! फिर उन महेश्वरी को प्रणाम करके ब्रह्मा आदि देवेश्वर अपने अपने स्थान को चले गए।' 'भगवती के द्वारा सब कार्य कर दिया गया है, कुछ भी शेष नहीं,' ऐसा शक्रादिकृत स्तुति में वर्णित है।

अथ कामेश्वरीविग्रहवर्णनम्

शुक्लं रक्तञ्च पीतञ्च हरितं कृष्णमेव च।
विचित्रं क्रमतः शीर्षमैशान्यां पूर्वमेव च॥
दक्षिणं पश्चिमं चैव तथैवोत्तरशीर्षकम्।
मध्यं चेति महाभाग क्रमाच्छीर्षाणि वर्णतः॥
शुक्लं माहेश्वरीवक्त्रं कामाख्या रक्तमुच्यते।
त्रिपुरा पीतसङ्काशा शारदा हरिता तथा॥
कृष्णं कामेश्वरीवक्त्रं चण्डायाश्चित्रमिष्यते।
धम्मिल्लसंयतकचं प्रतिशीर्षप्रकीर्तितम्॥
सिंहोपरि सितप्रेतं तस्मिंल्लोहितपङ्कजम्।

कामेश्वरी स्थिता तत्र ईषत्प्रहसितानना ॥
विचित्रांशुकसंवीतां व्याघ्रचर्माम्बरां तथा ।
एवं कामेश्वरीं ध्यायेद्धर्मकामार्थसिद्धये ॥
(कालिकापुराणे)
अत्र महाकालसंहितामतेन प्रेता वर्णितव्याः ।
कामर्तुमती कामेश्वरीति *सौभाग्यतरङ्गिणी* ।

अब कामेश्वरी के विग्रह का वर्णन करते हैं। कालिका पुराण में कहते हैं - 'कामेश्वरी के छः मस्तकों का श्वेत, लाल, पीला, हरा, काला और रंग-बिरंगा, ये वर्णक्रम है। ये क्रमशः ईशान, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर एवं मध्य में स्थित हैं। श्वेत वर्ण वाला मुख माहेश्वरी है, लाल मुख को कामाख्या कहते हैं। पीले रंग वाला त्रिपुरा एवं हरे रंग वाला मुख शारदा कहलाता है। कामेश्वरी का मुखमण्डल कृष्णवर्ण का एवं चण्डा का विचित्र है। उनके प्रत्येक मस्तक में केशपाश बद्ध है। सिंह के ऊपर उज्ज्वल प्रेत हैं, उनमें लाल रंग का कमल है।

उसी कमल के ऊपर मन्द मन्द मुस्कराती हुई कामेश्वरी स्थित है। उन्होंने विचित्र तोते को धारण किया हुआ है, व्याघ्र के चर्म से बना वस्त्र पहन रखा है। धर्म, अर्थ एवं काम की सिद्धि के लिये इसी प्रकार से कामेश्वरी का ध्यान करना चाहिये।' यहाँ महाकालसंहिता के मत से प्रेतों का वर्णन करना है। (महाकालसंहिता में ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र-ईश्वर-सदाशिव को प्रेत कहा गया है जो देवी के आसन के नीचे स्थित रहते हैं) सौभाग्यतरङ्गिणी के अनुसार कामेश्वरी कामातुरा एवं ऋतुमती हैं।

पूर्वोत्तरे नीलवनान्तरस्था
गुह्यान्तरे कूपगता सुनित्या।
या विश्वयोनिः कृतिहेतुभूता
कामेश्वरीं तां शरणं प्रपद्ये ॥४१॥

पूर्वोत्तर दिशा में नीलवन के भीतर स्थित गुफा के अन्दर कूप में जो अविनाशिनी स्थित है, जो विश्व की उत्पत्ति स्थान है, उसकी रचना का कारण है, उस कामेश्वरी की मैं शरण ग्रहण करता हूँ।

ज्ञानवतीटीका

कथं कृतिहेतुभूता ? नमामि त्वा विश्वकर्त्रीं परेशीमित्याह ब्रह्मा।
सत्तारूपे त्वां प्रपद्ये शरण्ये विश्वाराध्ये
सर्वलोकैकहेतुमिति विष्णुवचनम्।
सृष्टीच्छा समभूत्तस्या मुदा सद्यस्तदैव हि।
अरूपापि दधे रूपं स्वेच्छया प्रकृतिः परा॥
(महाभागवते महादेववचनम्)

किस प्रकार से विश्व की रचना का कारण है ? 'विश्व को बनाने वाली तुझ परमेश्वरी को मैं प्रणाम करता हूँ', ऐसा ब्रह्मा ने कहा। 'हे सत्तारूपिणी! हे शरण देने वाली ! हे सभी लोकों की कारणभूता ! मैं तुम्हारी शरण में हूँ', ऐसा विष्णु का वचन है। महाभागवत में महादेव का वचन है - 'जब उस परा प्रकृति को सृष्टि करने की इच्छा हुई तो

उसने प्रसन्न होकर स्वयं किसी भी रूप की न होने पर भी स्वेच्छा से रूप धारण कर लिया।'

कथं सा विश्वयोनिः ? प्रसविष्यामि भूतानि विविधानि निजेच्छयेत्याह प्रकृतिः पूर्णा जगदम्बा सनातनी। तथा च, मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरमिति गीतायां तस्मात् सा विश्वयोनिः।

किस प्रकार से वह विश्वयोनि है ? संसार की माता और सनातनी पूर्णा प्रकृति ने इस प्रकार कहा - 'मैं विभिन्न प्रकार के प्राणियों को अपनी इच्छानुसार जन्म दूंगी।' और भी, 'मेरी अध्यक्षता में प्रकृति चराचर जगत् को जन्म देती है', ऐसा गीता में (श्रीकृष्णवाक्य) वर्णित है, इसीलिए विश्वयोनि है।

श्रीब्रह्मपुत्रेण परिवृता या
पञ्चामराराधितप्रेतसंस्था।
मोक्षप्रदात्रीं भुवि राज्यदात्रीं
कामेश्वरीं तां प्रणमामि नित्यम् ॥४२॥

जो श्रीब्रह्मपुत्र से घिरी हुई है, जो देवताओं के भी द्वारा आराधित पांच प्रेतों के ऊपर बैठी हुई है, जो मोक्ष प्रदान करती है और संसार में राज्य देती है, उस कामेश्वरी को मैं प्रतिदिन प्रणाम करता हूँ।

ज्ञानवतीटीका

कथं सा प्रेतसंस्था ?

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः।
एते पञ्चमहाप्रेताः स्थिताः सिंहासनादधः॥
(महाकालसंहितायाम्)

किस प्रकार से प्रेत के ऊपर स्थित है ? महाकालसंहिता का वचन है - 'ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव, ये पञ्चमहाप्रेत देवी जी के सिंहासन के नीचे स्थित रहते हैं।'

कथं मोक्षदा भवति ?

मयि भक्तिमतां मुक्तिः सुलभा पर्वताधिप।
ततस्त्वं परया भक्त्या मां भजस्व महामते।
अहं त्वां जन्मजलधेस्तारयामि सुनिश्चितम्॥
(महाभागवते हिमालयं प्रति पार्वतीवाक्यम्)

किस प्रकार से मोक्ष देने वाली होती है ? महाभागवत में हिमालय के प्रति पार्वती का वचन है - 'हे पर्वतों के स्वामी ! मुझमें भक्ति रखने वाले लोगों के लिये मुक्ति सुलभ है। अतएव हे महामते ! परमा भक्ति के द्वारा तुम मेरी आराधना करो ! मैं जन्मसागर से निश्चित ही तुम्हारा उद्धार कर दूँगी।'

चैत्रवंशीयं सुरथमिक्ष्वाकुवंशीयं सुदर्शनं पुरुवंशीयं युधिष्ठिरं तथा चान्यान्नृपान् भ्रष्टराज्यान् देवानपि राज्यं प्रयच्छति सा राज्यदात्री।

चैत्रवंश में उत्पन्न सुरथ को, इक्ष्वाकुवंश वाले सुदर्शन को, पुरुवंशीय युधिष्ठिर तथा और भी अन्य राज्यभ्रष्ट राजाओं एवं देवताओं को राज्य देती है, अतएव वह राज्यदात्री है।

कामान्विता कामपरायणा च
कामारिहृत्पद्मगता सुगेहा।
कामानभीष्टान्ननु पुण्यदा सा
जयेच्च माता भुवनैकधात्री ॥४३॥
प्राग्ज्योतिषाधीश्वरदानवं या
व्याजेन नारायणसन्निविष्टा।
जहार युद्धे खलु काममुग्धं
कामेश्वरीं तां सततं नतोऽस्मि ॥४४॥
महासतीदेहविभाजनेन
धृत्वा च देहानि महोज्ज्वलानि।
नीलाञ्चले शङ्कररूपिणेऽस्मि -
न्निच्छानुसारेण विराजते सा ॥४५॥

काम से घिरी हुई, कामस्वभाव से युक्त, कामदेव के शत्रु (शिव) के हृदय-कमल में निवास करने वाली, अभीष्ट कामनाओं एवं पुण्यफल को निश्चय ही देने वाली, विश्व का पोषण करने वाली वह एकमात्र माता जयशालिनी हो। जिसने नारायण के अन्दर प्रविष्ट होकर उनके

बहाने स्वयं ही प्राग्ज्योतिषपुर के स्वामी काममोहित नरकासुर को युद्ध में मार डाला, उस कामेश्वरी को मैं सदैव प्रणाम करता हूँ। महासती के देह को खण्डित करने के कारण उत्पन्न अत्यन्त तेजस्वी शक्ति-पीठात्मक स्वरूपों को धारण करके वह इस शिवरूपी नीलांचल पर्वत में अपनी इच्छा के अनुसार विराजित रहती है।

ज्ञानवतीटीका

विष्णोश्चक्रप्रहारेण छायासतीदेहो विखण्डीकृतः पपात धरणीतले
सिद्धपीठे परिणतस्तदा तेषु शोकसन्तप्तहृदयः
शम्भू रोमाञ्चितकलेवरो बभूव।
दृष्टमात्रे तु सा योनिः काममुग्धेन शम्भुना।
पृथ्वीं विभिद्य पातालं गच्छन्तीव बभूव ह॥
दृष्ट्वैवं शङ्करः सत्या भूत्वांशेन गिरिः स्वयम्।
दधार योनिं हृष्टात्मा वर्णयन्भाग्यमात्मनः॥
सर्वेषु तेषु पीठेषु कामरूपादिषु स्वयम्।
पाषाणलिङ्गरूपेण ह्यधिष्ठाय व्यसेवत॥
(महाभागवते)

विष्णु के चक्रप्रहार से छायासती का देह टुकड़े टुकड़े हो कर पृथ्वी पर गिर पड़ा और सिद्धपीठों के रूप में परिणत हो गया। उस समय उनके प्रति शोक से व्यथित हृदय वाले भगवान् शम्भु के शरीर में रोमांच हो आया। महा-भागवत का वचन है - 'काम से मोहित शिव के द्वारा देखे जाने मात्र से वह योनिभाग पृथ्वी को विदीर्ण करने पाताल की ओर जाने लगा। सती के शरीर को ऐसा देखकर शिवजी ने अपने अंश से

पर्वत का रूप धारण करके प्रसन्न होकर अपना सौभाग्य समझकर उस योनि को धारण कर लिया। उन काम-रूपादि सभी पीठों में पाषाणलिंग बन उन्होंने अधिष्ठानपूर्वक सेवन किया।'

कथं नारायणेति कथ्यते ?
यः परः प्रकृतेः प्रोक्तः पुरुषः पञ्चविंशकः।
स एव सर्वभूतानां नर इत्यभिधीयते॥
नराज्जातानि तत्त्वानि नाराणीति ततो विदुः।
तान्येव चायनं तस्य तेन नारायणः स्मृतः॥
(नृसिंहपुराणे ब्रह्मवचनम्)

क्यों नारायण कहा जाता है ? नृसिंहपुराण में ब्रह्माजी का वचन है - 'जो तेईस विकारों के कारणभूत चौबीसवें तत्त्व प्रकृति से भिन्न पच्चीसवां तत्त्व है, वही सम्पूर्ण प्राणियों के देह में नर/पुरुष/आत्मा कहलाता है। सम्पूर्ण तत्त्व नर से उत्पन्न हैं, इसीलिए 'नार' कहलाते हैं। ये नार जिसके अयन (आश्रय) हैं, अर्थात् जो इनमें व्यापक हैं वे भगवान् नारायण कहे जाते हैं।'

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः॥
(हरिवंशपुराणे हरिवंशपर्वणि)

हरिवंशपुराण के हरिवंशपर्व का कथन है - 'जल का दूसरा नाम है नार, क्योंकि उसकी उत्पत्ति भगवान् नर से हुई है। वह जल पूर्वकाल में भगवान् का अयन अर्थात् निवास हुआ इसीलिये वे नारायण कहलाते हैं।'

प्राप्तुं भवानीमतिदिव्यरूपां
तपश्चरन्तं खलु कूपकुण्डे।
या धर्मकेतुं विरराम देवी
कामेश्वरीं तामहमानतोऽस्मि ॥४६॥

अत्यन्त दिव्य स्वरूप वाली भवानी को प्राप्त करने की इच्छा से कूपकुण्ड में तपस्या करते हुए धर्मकेतु को जिन्होंने (वरदान देते हुए) रोक दिया, उस कामेश्वरी की मैं शरण में आया हूँ।

ज्ञानवतीटीका

धर्मकेतुर्वृषध्वजो रुद्रः। वृषो हि भगवान् धर्म इति *स्कान्दे*। यथोमाख्या देवी हिमगिरौ शिवं भर्तृरूपेण प्राप्तुं तपश्चर्याञ्चकार तथैव कामाख्यापीठसन्निकटे कामेश्वररूपेण पातालगङ्गातटे कामेश्वरगुहायां कूपाकृत्यां शिवश्चापि गिरिजाकामनया ततापा। यथाह गिरिजा स्वपितरं प्रति -

शिवस्तु मद्वियोगार्तः कामरूपे व्यवस्थितः।
तपश्चरति मां लब्धुं पत्नीभावेन वै पुनः॥
(महाभागवते)

तं तप्यमानं शिवं देवी विरमयाञ्चकार वरञ्च ददौ।
यथोक्तमस्ति
प्रोवाच च महादेवी किं तेऽभिलषितं वद।

शिव उवाच

यथा हि कृपया पूर्वं स्थिता मद्गेहिनी स्वयम्।
तथैव हि पुनश्चापि भव त्वं कृपयेश्वरि॥
(महाभागवते)

धर्मकेतु का अर्थ वृष का चिह्न धारण करने वाले रुद्र हैं। भगवान् धर्म वृष हैं, ऐसा स्कन्दपुराण का मत है। जिस प्रकार से उमादेवी ने हिमालय में शिव जी को पतिरूप में प्राप्त करने के लिये तपस्या की, उसी प्रकार से कामाख्यापीठ के निकट कामेश्वररूप से पातालगंगा के तट पर, कूप की आकृति वाली कामेश्वर-गुफा में शिव जी ने भी गिरिजा की कामना से तपस्या की। जैसा कि महाभागवत में गिरिजादेवी अपने पिता से कहती हैं - 'शिव भी मेरे वियोग से दुःखी होकर मुझे पत्नीभाव से पुनः प्राप्त करने के लिये कामरूप में स्थित होकर तपस्या का आचरण कर रहे हैं।' उन तपस्या कर रहे शिव जी को रोक कर देवी ने वरदान भी दिया। जैसा कि महाभागवत में कहा गया है - ' महा-देवी ने कहा कि तुम्हारी क्या इच्छा है सो बोलो। तब शिव ने कहा कि हे ईश्वरी ! जैसे तुम कृपापूर्वक मेरी गृहिणी (पत्नी) बनकर स्थित थी वैसे ही कृपा करके पुनः बन जाओ।'

सिद्धान्तवादेषु सदारमन्तं
मार्गानुमार्गेषु परिभ्रमन्तम्।
देहाभिमानेन समाप्लुतं तं
कामेश्वरी सा प्रहिणोति मोक्षम् ॥४७॥

एवमाराध्य कामेशीं स तदालयमागमत्।
त्रिवत्सरे व्यतीते तु देवीवाक्यं सुमायया ॥४८॥
विसस्मार तदाचार्यो निग्रहो धर्मनन्दनः।
एकदा दण्डकारण्ये विहरन् देवमन्दिरम् ॥४९॥
नत्वा गत्वा पुनर्दुर्गाद्वात्रिंशन्नाममालया।
कल्पोपचारैः सम्पूज्य देवीं रुद्रेश्वरीं तदा ॥५०॥
ननाम दण्डवद्भूमौ मुद्रां कृत्वा यथाविधि।
सोऽपृच्छन्मनसा देवीं बोधितानि त्वया पुरा॥५१॥
सूत्राणि देहि मे मातर्विस्मृतानि मयाधुना।
मूढोऽहं त्वां कथं जाने मोहितस्तव मायया ॥५२॥

सिद्धान्तवाद में विश्राम रमण करने वालों को, नाना प्रकार के पन्थों के पीछे भटकने वालों को तथा देहाभिमान से ढके हुए लोगों को भी कामेश्वरी मोक्ष दे देती है। इस प्रकार से कामेशी की स्तुति करके वे (निग्रहाचार्य) अपने निवासस्थान को लौट गये। इस घटना के तीन वर्ष व्यतीत होने के बाद दृढ माया के कारण धर्मनन्दन निग्रहाचार्य देवीवाक्य को भूल गये।

एक बार दण्डकारण्य में भ्रमण करते हुए उन्होंने एक देवमन्दिर को देखा। वहाँ जाकर फिर प्रणाम करके उन्होंने रुद्रेश्वरी देवी की दुर्गा की बत्तीसनाममाला एवं मानसोपचार से पूजा की और दण्डवत् प्रणाम करके विधिपूर्वक मुद्राप्रदर्शन करके मन ही मन देवी से पूछा - 'आपके

द्वारा पूर्व में प्रबोधित सूत्रों को मैं अब भूल गया हूँ, अतएव हे माता ! आप उन सूत्रों को मुझे पुनः प्रदान करें। आपकी माया से मोहित हुआ मैं मूढ़ भला आपको किस प्रकार से जान सकता हूँ ?'

ज्ञानवतीटीका

त्रिवत्सरे व्यतीते मेदिनीदेवादिस्वशिष्यान्वितो रुद्रेश्वरीनामाख्यं वन्यदेवालयं वारम्वारं जगाम।

तीन वर्ष बीतने पर (निग्रहाचार्य) अपने मेदिनीदेव आदि शिष्यों के साथ वन में स्थित उस रुद्रेश्वरी नामक देवालय में बारम्बार गये। (वर्तमान में यह स्थान छत्तीसगढ़ के महासमुंद जिले की सिंघोड़ा घाटी में स्थित है।)

रुद्रेश्वरीमेवमुक्त्वा सम्मुखं स उपाविशत्।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा न्यासं कृत्वा तथा पुनः ॥५३॥
जजापेकाग्रचित्तेन स गायत्रीं चतुष्पदाम्।
दृष्ट्वा तं प्रार्थिनं विप्रं प्रसन्ना साभवत्तदा ॥५४॥
व्यतीते प्रथमे यामे हसन्ती तिमिरान्विते।
ददौ सूत्रान्महातेजान् तस्मै लोकहितैषिणे ॥५५॥
सूत्रान्सम्प्राप्य चारण्ये स ननाम मुहुर्मुहुः।
प्रणिपत्य नमस्कृत्य प्राह गद्गदया गिरा ॥५६॥

देवी रुद्रेश्वरी से ऐसा कहकर वे उनके सामने ही बैठ गये। तीन बार आचमन करके पवित्र हो, फिर न्यास करके उन्होंने एकाग्रचित्त से चतुष्पदा गायत्री का जप किया। प्रार्थना करते हुए उस ब्राह्मण को देखकर वह देवी उस समय प्रसन्न हो गयी। अन्धकार से भरी हुई उस रात्रि में प्रथम प्रहर के व्यतीत होने पर संसार के हित की कामना करने वाले निग्रहाचार्य को हँसते हुए उन्होंने अत्यन्त तेजस्वी सूत्रों को दे दिया। उस वन में सूत्रों को प्राप्त करके आचार्य ने बारम्बार प्रणाम किया और प्रणिपात-नमस्कार करके गद्गद वाणी से इस प्रकार कहा -

रक्ताम्बरामरुणनेत्रविचित्रभूषां
सिंहोरुसंस्थितवतीं वसुतुल्यतेजाम्।
मन्दस्मितां त्रिभुवनैकसमस्तधात्रीं
रुद्रेश्वरीं शरणदां सततं नमामि ॥५७ ॥
इष्वासशूलकरवालमृणालहस्तां
शुभ्राननां त्रिनयनां गिरिराजगेहाम्।
श्रीरुद्रदेवविबुधस्य गृहे वसन्तीं
रुद्रेश्वरीं सुमतिदामहमानतोऽस्मि ॥५८ ॥

लाल रंग के वस्त्र को धारण की हुई, लाल रंग के नेत्र एवं विचित्र आभूषणों से युक्त, सिंह के ऊपर स्थित, परमैश्वर्यतुल्य तेज से युक्त, मन्द मन्द हास्य वाली, समस्त त्रिभुवन की एकमात्र धात्री, शरण देने वाली रुद्रेश्वरी की मैं शरण में हूँ। बाण, शूल, तलवार और कमल को

धारण करने वाली, गौर वर्ण की, तीन नेत्रों वाली, पर्वतों पर निवास करने वाली, देवाधिदेव रुद्रदेव के घर में रहने वाली, सुन्दर मति को प्रदान करने वाली रुद्रेश्वरी के पास मैं उनकी शरण में आया हूँ।

सम्प्राप्ते तु शुभे काले सूत्रभाष्यं तथाकरोत्।
सर्वलोकशिवार्थञ्च सूत्रविस्तारनामकम् ॥५९॥

ज्ञानवतीटीका

चतुर्विंशतिदिवसपर्यन्तं नानापुरीग्रामे स्थित्वा चतुर्विंशतिवत्सरवयो निग्रहश्चतुर्विंशतितत्त्वाधिपतेः परमाक्षरब्रह्मण उपदेशं कृतवान्।

चौबीस दिनों तक *नानापुरी* नामक ग्राम में रहकर चौबीस वर्ष की अवस्था वाले निग्रह ने चौबीस तत्त्वों के अधिपति परमाक्षर ब्रह्म का उपदेश किया।

राज्यं देयं शिरो देयं सुता देयाः पदे पदे।
कृपणाय ह्यभक्ताय न देयं परमाक्षरम् ॥६०॥
इदं गोप्यं महागोप्यं प्राणैरपि धनैरपि।
यतो ब्रह्माक्षरं ज्ञात्वा न किञ्चिदवशिष्यते ॥६१॥
गुरुभक्ताय शान्ताय सर्वलोकहिताय च।
केवलं प्रियशिष्याय देयं सूत्रमिति स्थितिः ॥६२॥

शुभ काल के आने पर उन्होंने (निग्रहाचार्य ने) सभी लोकों के कल्याण के लिये सूत्र का सूत्रविस्तार नामक भाष्य किया। आवश्यकता पड़ने पर राज्य दे दे, अपना मस्तक भी दे दे, कदम कदम पर सन्तान को भी दे दे किन्तु कृपण (प्रमादी अथवा अश्रद्धालु) एवं अभक्त को परमाक्षर कभी न दे। यह गोपनीय है, अत्यन्त गोपनीय है। प्राण और धन से भी बढकर है क्योंकि ब्रह्माक्षर को जानने के बाद कुछ भी और जानना शेष नहीं रह जाता है। सभी लोकों के हित के लिये, शान्तचित्त, गुरुभक्त एवं केवल प्रिय शिष्य को ही यह सूत्र देना चाहिये, ऐसा सूत्राचार का नियम है, उसकी स्थिति है।

*-*-*

॥ इति ज्ञानवतीटीकासमन्वितं श्रीनिग्रहाचार्येण
श्रीभागवतानंदगुरुणा कृतमव्यक्ताद्वैतप्रकाशकं
सूत्रविस्तारभाष्यालङ्कृतं परमाक्षरसूत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ इस प्रकार से ज्ञानवतीटीका से युक्त श्रीनिग्रहाचार्य
श्रीभागवतानंद गुरु के द्वारा कृत अव्यक्ताद्वैतप्रकाशक
सूत्रविस्तारभाष्य से सज्जित परमाक्षरसूत्र पूर्ण हुआ ॥

*-*-*